मुद्रक—
बाबू सूरजभान गुप्त,
केसरी प्रेस
बेलनगंज-आगरा।

पुस्तक मिलनेका पता—
(१) अंजनी आदर्श, आगरा।
(२) वेदान्त केसरी कार्यालय,
बेलनगंज-आगरा।

श्रीमत् ब्रह्मचारी योगानंदजी महाराज

के

चरण कमलों में

सादर समर्पित।

श्रीमान् ब्रह्मचारी योगानंद जी

विषय सूची।

प्रस्तावना।

संसार को, विशेषतः तरुण समाज को, शारीरिक एवं मानसिक दुर्वलता में उत्तरोत्तर ग्रसित होता हुआ देखकर विचारशील मनुष्य को बड़ा कष्ट होता है। मनुष्य अपनी दुर्वलता से केवल अपनी ही हानि नहीं करते, किन्तु वे अपने साथ निकट सम्बंध रखने वालों को भी अपने ही समान दुर्वल बनाते हैं और उनसे होने वाली प्रजा भी दुर्वल, बुद्धिहीन व रोगी होती है। इस प्रकार सम्पूर्ण कुल, ग्राम, देश तथा राष्ट्र दुर्वल होते जाते हैं और परतन्त्रता की बेड़ी में दुःख और अपमान से जीवन व्यतीत करते हैं। इस सबका मुख्य कारण नाना प्रकार के अविचार से होने वाला वीर्य्य-नाश ही है। ब्रह्मचर्य्य का शास्त्रानुकूल पालन करना ही इन सब दुर्वलताओं को दूर करने का एक मात्र साधन है। अतः ब्रह्मचर्य्य नाश को तथा शारीरिक और मानसिक दुर्वलताओं को दूर करने के हेतु लेखक का यह तुच्छ प्रयत्न है।

योगियों ने अपने अनुभव से जिन आसनों का वर्णन किया है और जिनका अनुभव लेखक ने स्वयं भी किया है उन आसनोंका इस पुस्तकमें विशेषतासे वर्णन किया गया है। आसन कैसे कहां और किस समय करना चाहिये, इसके करने से क्या फल मिलता है, इसके अभ्यास में किन २ वातों का ध्यान रखना

पड़ता है आदि आदि विषयों को सुलभ करने के लिये सरल हिन्दी भाषामें स्थान, समय, आहार, विहार आदि सहित आसनों की विधि तथा उनसे होने वाले फल का विशेष वर्णन इस पुस्तक में किया गया है। आसनों की विधि ठीक ठीक जानने में कभी कभी कठिनाई होती है। अतः आवश्यकतानुसार आसनों के फ़ोटो भी स्थान स्थान पर दिये गये हैं। तरुण समाज से हमारी यही प्रार्थना है कि वे इस उपयुक्त साधन का उचित उपयोग करके अपने शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को प्राप्त कर अपने जीवन के आदर्श रूप परम शान्ति को प्राप्त करें जिस से कि हमारा यह परिश्रम और प्रयत्न सफ़ल हो।

* * *

एक समय हम हरिद्वार से लौटकर गंगाजी के किनारे भ्रमण करते करते भगवानपुर पहुंचे और वहाँ दक्षिणी बाबा की कुटी पर कुछ दिन निवास किया। प्रातःकाल उठकर गंगा स्नान करके सन्ध्या वन्दन और गायत्री जप के अनन्तर श्रीस्वामी रामदासजीके पवित्र ग्रंथ "समर्थ संजीवनी" का पठन, मनन तथा निदिध्यासन करते हुए हमारे दिन व्यतीत होते थे। एक दिन श्रीमान् ब्रह्मचारी योगानन्दजी इधर होकर जा रहे थे, विश्रांति के लिये किंचित्त काल पर्यन्त यहां ठहरे। कुछ वार्तालाप के उपरान्त आपने बड़े प्रेम से हमको अपने माण्डव आश्रम पर चलने के लिये कहा और आश्वासन दिया कि वहाँ हमको साधन, भजन आदि में सब प्रकार से सुभीता रहेगा। लगभग ३—४ दिन उपरांत आप अपने आश्रम

को लौटते समय हमको भी अपने साथ लेते गये। इस आश्रम में उस समय ५—६ साधु निवास करते थे, उनमें श्रीयुत ब्रह्मचारी विष्णु नामक एक उन्नत महाराष्ट्रीय साधक थे जो उस समय हठयोग का अभ्यास करते थे। वे दस-ग्यारह आसन भली प्रकार नित्य नियमित रीति से करते थे। उस समय हमारा शरीर कुछ स्थूल था, आहार भी अधिक था और आलस्य की मात्रा विशेष थी। भजन यथोचित रीति से बनता नहीं था। अतः हमने शरीर को किंचित् पतला करने के लिये कुछ आहार कम करने का तथा आसन करने का निश्चय किया। विष्णु जी उस समय एकान्तमें अपना अभ्यास करते थे। उनसे प्रार्थना की कि आसन करते समय वे हमको अपने पास बैठने की आज्ञा दें। आपकी सम्मति प्राप्त होने पर एक दिन आसनोंको देखकर हम भी उनमें से कुछ आसनों का अनुकरण करने लगे, किन्तु हमारा शरीर स्थूल और पुष्ट होने से तथा नाड़ियां और स्नायुओं की कठिनता के कारण हमको इस प्रयत्न में विशेष सफलता प्राप्त न हुई। शीर्षासन करते समय तो एक बार हम गिर भी पड़े, इस पर विष्णुजी ने कहा कि अभ्यास में जल्दी करनी नहीं चाहिये। गिरने पर नाड़ियों को धक्का लगने से शरीर में विकार हो जानेकी सम्भावना है। क्रमपूर्वक धीरे धीरे प्रयत्न करने से शनैः शनैः एक मास में तुम्हारा शीर्षासन आसानी से होने लगेगा।

* * *

सायंकाल के समय हम सब साधु एकत्र बैठ कर कुछ काल अपने २ अनुभव कहा करते थे। उनमें श्रीमान् ब्रह्म-

चारी योगानन्दजी के मुख से उनकी योग क्रिया के विषय में आश्चर्य जनक बातें सुनने से हमारे चित्त पर विचित्र प्रभाव पड़ता था। एक दिन हमने श्री ब्रह्मचारीजी से योग क्रिया सिखाने की विनती की। उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से इस बात को स्वीकार किया। ... ...

दूसरे दिन से ही हमारे शरीर की गति आसनों की ओर होने लगी और हलासन, सर्वाङ्गासन, शीर्षासन आदि अनेक आसनों के करने की इच्छा उत्पन्न हुई और लगभग १५ दिन में ही कितने ही आसन, कोई पूर्ण तो कोई अपूर्ण ऐसे होने लगे। शरीर में और आहार में भी परिवर्त्तन होगया। इस प्रकार हमको आसनों से परिचय हुआ। नियमित रीति से मानसिक उन्नति के साधन के साथ साथ आसनों का अभ्यास कुछ काल पर्यन्त करते रहे।

कुछ समय के पश्चात् स्वर्गाश्रम जाने का अवसर मिला और वहां एकान्त में एक गुफा में रहकर और कुछ दिन स्वल्प आहार अर्थात् केवल उबले हुए पाव भर आलू दो तोले घी के साथ खाकर आसनों का अभ्यास करते रहे। इस समय शरीर आवश्यकतानुसार पतला होने के कारण हम एक २ आसन पर बड़ी देर तक सुलभतापूर्वक रहने लगे। सिद्धासन, पद्मासन, कूर्मासन और शीर्षासन में उचित समय तक अभ्यास करने से हमको दुहरा लाभ हुआ; प्रथम तो शरीर स्वास्थ्य का और द्वितीय स्थिरता के कारण मानसिक उन्नति तथा एकाग्रता का। उत्तरोत्तर शारीरिक स्वास्थ्य में इन्हीं आसनों के अभ्यास से

विशेष लाभ हुआ है और शरीर स्वस्थ होने से ही मानसिक विकास में नित्य प्रति उन्नति होती गई।

* * *

अधिकांश लोग आसनों के फल की प्राप्ति की चेष्टा में उन बच्चोंका सा आचरण करते हैं जो धरतीमें बीज बोकर थोड़ी ही देर में देखने लगते हैं कि उनमें कुछ फूट निकला या नहीं और जब कुछ नहीं दीखता तो निराश होजाते हैं। बिना गुरु के केवल पुस्तकों को देखकर कुछ दिनों एकाध–आसन करने से जब कुछ फल मालूम नहीं होता तो आसनों की निन्दा करने लगते हैं और कहते हैं कि हमने अमुक अमुक आसन किये परन्तु कुछ लाभ न हुआ। वे लोग यह नहीं सोचते कि जितना रोग पुराना होता है उतना ही उसके अच्छे होने में देर लगती है, चाहे दवा कितनी ही अच्छी हो और कैसे ही प्रसिद्ध डाक्टर या वैद्य की हीं क्यों न हो। यदि रोग पुराने और कष्ट–साध्य हों तो ८ या १० दिन के अभ्यास से और वह भी अशुद्ध रीति से आसन करते हुए यह चाहना कि कोई लाभ हो तो यह व्यर्थ है। नियम और परहेज़ के साथ कुछ दिन अभ्यास करने से अवश्य ही लाभ होगा।

आसनों के विषय में कुछ लोगों के ऐसे २ विचार हैं कि उनके अज्ञानता को देखकर हँसी आती है। पहिले तो बड़े उत्साह से वे लोग आसन करने लगते हैं और जब उन्हें एक या दो सरल आसन बताये जाते हैं तो वे कहने लगते हैं कि इसमें क्या है,

इसको तो हम बड़ी आसानी से कर सकते हैं, कोई दूसरा अच्छा सा आसन बतलाइये। जब शीर्षासन, हलासन आदि बताये जाते हैं तो इन्हें भी वे किसी न किसी प्रकार लगा ही लेते हैं और फिर कहते हैं कि इनमें भी कुछ नहीं है ये बहुत आसान हैं।

आसनों को कुछ ऐसा खेल न समझना चाहिये कि जिससे लोगों का मन बहलाया जा सके, न इनको धन कमाने का साधन बनाया जाना चाहिये। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए शारीरिक स्वास्थ्य की आवश्यकता है और यह स्वास्थ्य आसनों के द्वारा प्राप्त हो सकता है। इसको केवल व्यायाम समझ कर जीवन के अन्तिम उद्देश्य का ध्यान न रखना बुद्धिमानी नहीं है और न इस प्रकार किसी की वास्तविक उन्नति हो सकती है।

अतः जगत् के कल्याणार्थ बा० हनुमानप्रसादजी के आग्रह से हम अपने आसनोंके अनुभवों को संसार के समक्ष रखने का यह तुच्छ प्रयत्न करते हैं। आशा है कि साधारण जनता विशेषतः नवयुवक समाज इन अनुभवों से लाभ उठाकर अपने शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति करेंगे।

इस पुस्तक में आसनों का क्रम एक विशेष दृष्टि से रखा गया है, इसलिये इसमें सुलभता से होने वाले आसन प्रथम नहीं दिये गये हैं, क्योंकि सुलभ होने वाले आसनों को प्रथम करने से कठिन आसन करने में विशेष मदद मिलती हो, यह नियम नहीं है। दूसरे, आरंभ से अंत तक सब आसन करने की आवश्य-

कता भी नहीं होती, इसलिये सुगमता से होने वाले आसन हमने प्रथम नहीं दिये हैं। कौन मनुष्य कौन २ आसन करे यह बात उस मनुष्य के शारीरिक अवस्था का विचार करके ही निश्चित हो सकती है तो भी साधारण मनुष्य को अपना स्वास्थ्य सुधारने के लिये कौन २ से आसन करना उपयोगी है इस संबन्ध में हम इस पुस्तक के अन्त में विचार करेंगे। आसनों के अभ्यास में ध्यान में रखने योग्य सूचनाएं भी अन्त में दी जांयगी । इस-लिये पाठकों को चाहिये कि वे इस पुस्तक को आदि से अंत तक ध्यान से पढ़ें और जिन आसनों के अभ्यास करने का विचार हुआ हो, उनका विवरण तथा नियम ध्यानपूर्वक पढ़ कर पूर्ण सावधानी के साथ अभ्यास प्रारंभ करें।

लिखने का अभ्यास न होने के कारण इस ग्रन्थ में त्रुटियां रह जाना संभव है; विद्वान् पाठकगण हमारे पवित्र उद्देश की ओर ध्यान देते हुए उदार अंतःकरण से क्षमा करें। कृपया यदि वे त्रुटियों की प्रकाशक को सूचना दें तो दूसरे संस्करण में उसका अवश्य विचार किया जायगा।

'राम'

॥ ॐ शेषाय नमः ॥

सचित्र योगासन ।

आसन करने योग्य स्थान ।

आसन किसी सुरक्षित स्थान में करने चाहियें, जहां शुद्ध वायु का स्वतन्त्रता से संचार होता हो और भूमि साफ और समतल हो। ऊँची नीची जगह होने से आसन करते समय शरीर का कोई भाग ऊँचा और कोई नीचा होजायगा और इस विषमता के कारण शरीर के अंगों में न्यूनाधिक रक्त प्रवाह होने के कारण लाभ के स्थान में हानि की संभावना रहेगी।

शरीर में एक प्रकार की अग्नि हर समय रहती है और शरीर का स्वास्थ्य इसी अग्नि पर निर्भर रहता है। यह अग्नि साधारण अग्नि के समान ज्वाला युक्त नहीं दिखाई देती तो भी अनेक प्रमाणों से हमको पता चलता है कि यह अग्नि शरीर में उपस्थित है। जिह्वा के नीचे या बगल में दबाने से थर्मामीटर का पारा ऊपर चढ़ता है जिससे यह विदित होता है कि शरीर में एक विशेष प्रकार की अग्नि है और इसी कारण शरीर गरम मालूम होता है। इसी अग्नि के किंचित मन्द होजाने से नाना व्याधियां उत्पन्न होने लगती हैं।

अतः आसन करने का स्थान ऐसा होना चाहिये जहां शुद्ध वायु प्रवाह विशेष हो। आसन करते समय शुद्ध वायु और सात्विक आहार का यदि ध्यान न रक्खा जावे तो आसनों से होने वाला पूर्ण स्वास्थ्य लाभ नहीं होगा। बिछाने का आसन न अधिक कठिन होना चाहिये न विशेष मुलायम ही; सामान्यतया मोटे कम्बल की चार तह करके उसके ऊपर आसन करना अच्छा है।

आसन करने का समय।

प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में चार बजे शय्या से उठ कर शौचादि नित्य कर्म से निवृत्त होकर यदि होसके तो स्नान भी कर लेना चाहिये, इसके बाद आसन करना उचित है। सवेरे उठने के बाद काम करने में जो आलस्य आता है वह आसन करने पर नहीं रहता, काम करने को मन उत्साहित रहता है, चित्त में प्रसन्नता प्रतीत होती है और लगभग दो घंटे पश्चात् भूख तेज लगती है। रात्रि में खाया हुआ भोजन प्रातःकाल तक पच जाता है और शौचादि के बाद शरीर हलका और पेट खाली हो जाता है इस कारण भी ऐसी अवस्था में आसनों का अभ्यास सुलभ और आनन्दप्रद मालूम होता है। भरे हुए पेट में आसन करने से कष्ट मालूम होता है और अपक्व (कच्चा) खाद्य द्रव्य व्यायाम के कारण पक्वाशय में से आमाशय में आजाता है और इससे पेट में दर्द हो जाने की आशंका रहती है। अतः आसन खाली पेट ही करने चाहिये कम से कम भोजन के तीन घन्टे बाद आसन किये जाने चाहियें।

यदि शीत आदि विशेष कारणों से यह समय कष्टकर प्रतीत हो तो संध्या समय भी उत्तम है। एक बात का ध्यान रहे कि आसन करते समय शरीर पर एक लंगोटे के अतिरिक्त और कुछ न हो इस प्रकार करने से शरीर भी समान अवस्था में रहेगा और रक्त प्रवाह में भी किसी प्रकार की रुकावट नहो सकेगी। यदि अधिक शीत वा कारण विशेष से बिना कपड़े पहिने आसन करना संभव न हो तो पांव में मोजे पहन कर और एक चुस्त वनियान पहिन कर आसन किये जा सकते हैं इन कपड़ों से कोई हानि नहीं है। आसन करने के लगभग दो घन्टे बाद भोजन करना चाहिये। यदि प्रातः और संध्या दोनों समय आसन किये जावें तो बहुत ही अच्छा है। आसनों के अभ्यास में शीघ्रता न करके उनको धीरे २ ही बढ़ाना चाहिये।

आहार।

मनुष्य के शरीर में स्थूल तथा सूक्ष्म द्रव्य है और प्राण नामक एक विशेष शक्ति कार्य करती है। इसमें पांच कोष हैं; (१) अन्नमय कोष (२) प्राणमय कोष (३) मनोमय कोष (४) विज्ञानमय कोष (५) गुहाशय वा आनन्दमय कोष। शरीर के सारे व्यापार अन्न पर अवलम्बित हैं यदि मनुष्य को किसी प्रकार का भोजन न दिया जाय तो उसकी इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि आदि केवल १५ दिनके भीतर ही निस्तेज हो जाँयगी और अन्तमें वह मर जायगा। यदि किसी क्षुधातुर पुरुष को जिसकी शक्तियों का इस प्रकार

ह्रास हो चुका हो धीरे २ भोजन दिया जाय तो शारीरिक व्यापार पूर्ववत फिर होने लगेंगे। अतः स्थूल शरीर को स्वस्थ तथा नियम में रखने के लिये अन्न की आवश्यकता है। प्रत्येक मनुष्य का भोजन खाद्य, लेह्य, (खीर आदि) चोष्य (आम नीबू वगैरह) और पेय (दूध जल इत्यादि), ऐसे चार प्रकार के पदार्थों का बनता है। इन चारों प्रकार के पदार्थों में तथा अन्य सब सृष्टि के पदार्थों में भी तीन गुण सत्व, रज और तम भिन्न २ प्रमाण में रहते हैं। जिन पदार्थों में उपर्युक्त गुणों मेंसे जिस २ का प्राधान्य होता है वे पदार्थ उसी के अनुसार क्रमशः सात्विक, राजसिक अथवा तामसिक कहलाते हैं। मनुष्य का भोजन जिस गुण के पदार्थों का होगा वेही गुण उस के शारीरिक तथा मानसिक व्यापार में दृष्टिगत होंगे; क्योंकि मनुष्य जो द्रव्य खाता है उसीसे जठराग्नि द्वारा रस, रक्त, माँस, मज्जा, अस्थि, वीर्य्य आदि पदार्थ बनते हैं और उसी के सूक्ष्म परिमाणुओं से प्राण से लेकर मन तक का सारा व्यापार चलता है। यह प्राण ही क्रियात्मक शरीर का जन्मदाता है, यह प्राण ही भोक्ता है, अतः तामसिक भोजन से प्राण में तामसिक प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। इन्द्रियों की चेष्टायें तामसिक होने के कारण तथा मन के तज्जनित तामसिक संस्कारों द्वारा संकल्प विकल्प और शारीरिक क्रियायें भी तामसिक हो जाती हैं अर्थात् मनुष्य में चोरी, खून, व्यभिचार और अन्य अधर्म युक्त कार्य करने की प्रवृत्ति होती है। इसके विपरीत सात्विक भोजन से मन बुद्धि शुद्ध होते हैं और विचार तथा क्रियात्मक शरीर में सात्विक भावों की जागृति होती है। शास्त्रों

का यही अभिप्राय है। "सत्वात् संजायते ज्ञानम्" या "सत्वं सुखे संजयति" आदि भगवद्गीता के वचनों में सात्विक आहार से सात्विक मन बुद्धि बनती है; ऐसा निर्देश किया गया है। उस सात्विक बुद्धि जनित ज्ञान द्वारा (अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानम् विद्धि सात्विकम्) नानात्व में एकत्व भाव दृष्टिगत होने लगता है और 'ज्ञानादेवतु कैवल्यम्' इस वचन के अनुसार कैवल्य अर्थात् ब्रह्मानन्द, जो कि मनुष्य जीवन का एक मात्र ध्येय है, इस ज्ञान द्वारा प्राप्त होता है।

भोजन नियमित परिमाण में होना चाहिये। यदि सात्विक भोजन भी आवश्यकता से अधिक किया जाय तो जठराग्नि उसे पचा न सकेगी और अजीर्ण होने की आशंका रहेगी, शरीर एवं मन अस्वस्थ होगा और उन्नति का मार्ग काल विशेष तक रुक जायगा। इसीलिये कृष्ण भगवान् ने गीता में कहा है कि 'युक्ताहार विहारस्य योगो भवति दुःखहा।' अर्थात् आहार और शरीर की सब चेष्टायें युक्त होनी चाहिये तभी दुख का नाश करने वाला योग सिद्ध होता है। यहां युक्त शब्द का अर्थ क्या है इसका थोड़ा सा विचार करना आवश्यक है। यहां युक्तसे मतलब थोड़ेसे नहीं है, इसका अर्थ आवश्यकताके अनुसार अर्थात् न थोड़ा न बहुत ऐसा लिया जायगा जैसे दीपक जलने के लिये तेल और बत्ती दोनों ही की जरूरत है परन्तु यदि तेल दीपक इतना अधिक डाला जाय कि बत्ती की ज्योति तक पहुँच जाय तो दीपक बुझ जायगा और तेल इतना कम डाला जाय कि वह

बत्ती में होकर न चढ़ सके अथवा बत्ती ही ऊपर तक न भीग सके तो भी दीपक जल न सकेगा। इसी प्रकार जठराग्नि को प्रदीप्त रखने के लिये जितने भोजन की आवश्यकता है उतना ही खाना चाहिये, न अधिक न कम। कोई मनुष्य जिसकी शक्ति एक सेर भोजन हज़म करनेकी है, यदि वह केवल पावभर ही खाने लगे तो उसके पच जाने पर जठराग्नि शेष शरीर के धातुओं को ही भस्म करने लगेगी और इस प्रकार कुछ काल में शरीर दुर्बल हो जायगा, बीमारियों के कारण मन भी अस्वस्थ तथा अशान्त रहेगा और भावी उन्नति में रुकावट पड़ेगी। अल्पाहार केवल उसी मनुष्य के लिये ठीक है, जिसके शरीर में मेद, मज्जा श्लेष्मा आदि बढ़े हुए हों; क्योंकि इस दशामें जठराग्नि इनअनिष्ट उपयोगी द्रव्योंको जलावेगी और धीरे २ शरीर स्वस्थ हो जावेगा परन्तु स्वस्थ शरीर वाले के लिये अल्पाहार हानि कारक ही सिद्ध होगा।

शास्त्रों के अनुसार युक्ताहार से तात्पर्य यह है कि मनुष्य अपने पेटका आधा भाग खाद्य पदार्थोंसे भरे, एक चौथाई जल से भरे और शेष चौथाई भाग वायु संचारके लिये खाली रक्खे। इस आधे और चौथाई का अनुमान करना अधिकतर लोगों के लिये कठिन होता है, इसलिये भोजन के समय इन लोगों को केवल इतना ध्यान रखना चाहिये कि पेट में भार न मालूम दे आलस्य जम्हाई आदि न आवे, काम करने में उत्साह रहे और भोजन कर चुकने पर भी शरीर हल्का मालूम दे इस प्रकार

भोजन करना चाहिये। जिस भोजन के बाद निद्रा आने लगे, जम्हाई और आलस्य आने लगे, काम करने को चित्त न चाहे, शरीर भारी मालूम हो और श्वास प्रश्वास चलनेमें कष्ट प्रतीत हो उस आहार या भोजनको अयुक्त जानना चाहिये। यदि परिमित सात्विक आहार किया जाय तो शरीर स्वस्थ तथा नीरोग रहेगा और मन भी शान्त रहेगा।

योग और आसन।

आसनों का उपयोग अधिकतर अध्यात्मिक उन्नति के साधन रूप योग-मार्गमें किया जाता है, और उनका योग शास्त्रमें विस्तारसे वर्णन है। जिस प्रकार भक्ति मार्ग में श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य भाव, सख्यभाव तथा आत्म निवेदन ये नौ श्रेणियां हैं और उनका उत्तरोत्तर अभ्यास करने से प्रिय दर्शन होता है। इसी प्रकार योग-मार्ग में उत्तरोत्तर आठ सीढियों को पार करना पड़ता है, इसीलिये इसको अष्टांग योग भी कहते हैं। आठवीं श्रेणी को प्राप्त करनेके लिये यानो समाधि के लिये साधक को सात सीढियां चढनी पड़ती हैं। ये सात सीढियाँ उत्तरोत्तर इस प्रकार हैं:-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा और ध्यान। इनमें यम और नियमके अविच्छिन्न पालन करने से सात्विक वृत्तियां उत्पन्न होती हैं और आसनोंके अभ्यास के द्वारा शरीर को योगाग्नि से पका कर आध्यात्मिक उन्नति में जो तीन विघ्न हैं उनमेंसे पहिला विघ्न अर्थात् मल दूर किया जाता है

व्यायाम हो भी नहीं सकते। इसके विपरीत, आसन करने के लिये न धन की आवश्यकता है न साथियों की आसन हमेशा किये जा सकते हैं और प्रायः एकान्त ही में किये जाते हैं। उन व्यायामों में दौड़ने की तथा अन्य शीघ्रता पूर्वक विषम चेष्टायें करनी पड़ती हैं, श्वास प्रश्वास तेज चलने लगते हैं, जिनसे प्राण के चंचल होने से मनभी चंचल होता है और शुद्ध सात्विक विचारों को स्थिर रखना तथा उपासना के लिये एकाग्रता का अभ्यास करना असम्भवसा होजाता हैं।

ये दोष जो अन्य व्यायायोंके करनेसे उत्पन्न होते हैं, आसनों में नहीं पाये जाते। आसन करने से शरीर के अङ्ग स्वस्थ और स्थिर रहते हैं, श्वास प्रश्वाश की गति बहुत कम होजाती है और यदि आसन करते समय श्वास प्रश्वास पर विशेष ध्यान रक्खा जाय तो प्राण वश में होकर मन भी स्वस्थ होजाता है। मन उच्च विचारों को ग्रहण करने योग्य होजाता है और इस प्रकार शनैः शनैः मानसिक उन्नति के साथ ही साथ एकाग्रता का अभ्यास भी होजाता है। शरीर की नाड़ियां, जोड़ और पुट्ठे मुलायम और मजबूत हो जाते हैं, जठराग्नि प्रदीप्त हो जाती है और रक्त प्रवाह आसानी से तथा शीघ्रतर होने लगता है।

मन की एकाग्रता के लियेशरीर के सब अवयवों की निश्चलता की बड़ी आवश्यकता है और यह आसनों ही से सम्भव है। योगेश्वरों ने बड़े परिश्रम से आसनों की खोज करके जगत् कल्याण के लिये इनका प्रतिपादन किया है जिन के द्वारा शारीरिक और मानसिक दोनों ही प्रकार का स्वास्थ्य लाभ हो सकता है।

मेस्मेरिज्म, हिप्नाटिज्म के प्रयोग जिन छोटे २ बालकों पर किये जाते हैं, उन को सब से पहली शिक्षा यही दीजाती है कि वे अपना शरीर ढीला करें, हिलें नहीं और मन को विचार शून्य करके प्रयोग करने वाले की दृष्टि पर ध्यान रक्खें इस प्रकार मन शीघ्र ही एकाग्र हो जाता है और ऐसे शान्त मन पर डाले हुये संस्कार शीघ्र ही अपना असर करते हैं। इन सब चमत्कारों का एक मात्र कारण केवल मानसिक स्तब्धता है शारीरिक निश्चलता के साथ ही साथ इस मानसिक वृत्ति को प्राप्त करने का सहज राज-मार्ग "आसन" ही है।

प्राथमिक व्यायाम ।

आसनों से होने वाले विविध लाभों को सुनकर उनकी ओर कुछ मनुष्यों की प्रवृत्ति होते हुये भी अपने शरीर को स्थूलता अथवा स्नायुओं की कठिनता के कारण आसनों को न होते देख कर वे निराश होकर अभ्यास छोड़ देते हैं। ऐसे मनुष्यों को ध्यान रखना चाहिये कि सब काम अभ्यास से सिद्ध होते हैं। अभ्यास में लगे रहने से प्रारम्भ में कठिन से कठिन प्रतीत होने वाले आसन भी आसानी से लगने लगते हैं। इस बात का बार२ अनुभव किया गया है। इस पर भी आगे कुछ ऐसे व्यायाम दिये जाते हैं, जिनको प्रारम्भ में यदि आसनों के पहिले किया जाय तो आसन करने में कुछ सुलभता अवश्य प्रतीत होगी, परन्तु इन व्यायामों को आसनों के पहिले करना नितान्त आवश्यक नहीं है।

व्यायाम नं० १—एड़ियां मिला कर सीधे खड़े हो जाओ फिर

(अ) मुट्ठियां बाँध कर हाथों को कन्धे के ऊपर खूब तानो। पश्चात् हाथों को कोहनियों से मोड़ कर कन्धों पर धीरे२ ले जाओ और फिर पूर्ववत् ऊपर ले जाओ।

(इ) मुट्ठियां बांध कर हाथों को दोनों ओर फैलाओ, हाथ धरती से समानान्तर रहे। पश्चात् पूर्ववत् मुट्ठियां कंधो पर ले आओ और फिर हाथ पूर्ववत् फैला दो।

(उ) मुट्ठियां बांध कर हाथों को सामने फैलाओ। पूर्ववत् मुट्ठियां कंधो पर लाओ और फिर हाथों को पहिले के समान फैला दो।

इन तीनों प्रकारों को प्रति दिन २०-२५ बार करना चाहिये। यह व्यायाम करते समय शरीर स्थिर रखना चाहिये, हाथों को जितना वन सके फैलाना चाहिये और मुट्ठियां मज़वूत रखते हुए हाथों को ऊपर नीचे आने में उनके स्नायुओं को खूब सख्त रखना चाहिये।

व्यायाम नं० २

(अ) दोनों की हाथों मुट्ठियां वांध कर उनको कंधों क़ी सीध में दोनों ओर फैलाओ। पहिले उनको छाती के सामने कंधों की रेखा में लाकर मिलाओ। फिर वहां से नीचे ले जाओ और फिर पहिले के समान उनको कन्धों की रेखा में ले जाओ।

(इ) दोनों हाथों की मुट्ठियां वांध कर उनको अपने सामने तानो; हाथ धरती से समानान्तर रहें। फिर उनको दोनों कन्धो की रेखा में लाकर वैसे ही पीछे ले जाओ, फिर जिस प्रकार लाये थे उसी प्रकार उनको अपने सामने ले आओ।

(उ) दोनों हाथों की मुट्ठियां बाँध कर उनको अपने सामने तानो, फिर उनको अपने शरीर के समानान्तर दोनों ओर घुमाओ, हाथ कोहनियों से मुड़ने न पावें। इसी प्रक़ार हाथों को उलटी तरफ़ से घुमाओ।

यह व्यायाम प्रथम धीरे २ और पश्चात् कुछ जल्दी जल्दी करना चाहिये और हर एक प्रकार २०-२५ बार करना चाहिये।

यह व्यायाम करते समय शरीर स्थिर रखना चाहिये और हाथ कुछ ढीले रखने चाहिये।

व्यायाम नं० ३

(अ) सीधे खड़े होकर बांये पांव को धीरे धीरे आगे की ओर ले जाओ। पांव घोंटुओं से मुड़ने न पावे। फिर उसको वापिस ले जाओ और उसी तरह दाहिने पांव को आगे उठाओ और वापिस ले जाओ। पांव खूब तने रखो।

(इ) सीधे खड़े होकर बांयें पांव को बांई ओर कमर तक उठाओ; पांव घोंटू में मुड़ना न चाहिये। बांऐ पांव को वापिस रख कर इसी प्रकार दाहिने पैर को उठाओ और वापिस ले जाओ।

(उ) सीधे खड़े होकर बांए पांव को पीछे की तरफ़ तानो और उसको वापिस रख कर फिर दाहिने पांव को पीछे तानो।

इस व्यायाम में शरीर स्थिर तथा पांव खूब तने रहने चाहिये घोंटुओं में, मुड़ने न चाहिये। इस व्यायाम को प्रतिदिन १०-१५ बार करना चाहिये।

व्यायाम नं० ४

(अ) सीधे खड़े होकर बांए पैर को धीरे धीरे आगे की ओर उठाओ। घोंटू न मुड़ते हुये पांव धरती से समान्तर हो जाय। फिर वहां से उसको बाईं तरफ ले जाकर

पीछे की तरफ ले जाओ और फिर घुटने में मोड़ कर आगे की ओर ले आओ। इसी प्रकार दाहिने पांव से भी करो।

(इ) सीधे खड़े होकर बांए पांव का घोंटू धीरे २ छाती तक ले आओ, फिर वैसे ही नीचे ले जाओ इसी प्रकार दाहिने पांव के घोंटू को उठा कर छाती तक ले आओ।

(उ) बांए पांव को घोंटू में मोड़ कर उसको पीछे कमर के के नीचे तक जोर से ले जाओ, फिर नीचे ले जाओ। इसी प्रकार दाहिने पांव से करो।

इस व्यायाम को प्रथम धीरे २ और पश्चात् तेजी से करना चाहिये। इसका प्रत्येक प्रकार १५-२० वार करना पर्याप्त है।

व्यायाम नं० ५

दोनों पांवों में एक हाथ का अन्तर रख कर सीधे खड़े हो जाओ। दोनों हाथ कमर पर रख कर सिर घुटने की तरफ ले जाओ। जितना जाय उतना ले जाकर फिर पूर्ववत् खड़े हो जाओ। कुछ दिन अभ्यास हो जाने से सिर घोंटू तक चला जायगा। यह व्यायाम ५-७ वार करना चाहिये।

व्यायाम नं० ६

आसन पर बैठ कर पांव अपने सामने फैलाओ। फिर एड़ियों को आगे सरका कर पंजे अपनी तरफ खूब खींचो। फिर पंजों को आगे धकेल कर एड़ियां अपनी ओर खींचो। इस प्रकार इनको

जल्दी २ आगे पीछे किया करो। यह हलचल केवल गट्टों के नीचे रहे, शरीर का और भाग हिलने न पावे।

यह व्यायाम २०-२५ वार करना चाहिये।

व्यायाम नं० ७

आसन पर वैठ कर पांव अपने सामने फैलाओ। अब वांये पांव को वांई ओर और दाहिने को दाहिने ओर ले जाओ, पांव तने रहें मुड़ने न पावें। फिर उनको पूर्ववत् अपने सामने लाकर मिलाओ।

यह व्यायाम प्रथम धीरे धीरे और पश्चात् जल्दी जल्दी करना चाहिये। इसको ८-१० वार करना पर्याप्त है। यह व्यायाम आरम्भ में न किया जाय।

सूचना—इन व्यायामों को करने से वाद पर्याप्त विश्रान्ति लेकर शरीर स्वस्थ हो जाय जब ही आसनों का अभ्यास प्रारम्भ करना चाहिये।

चित्र नं०
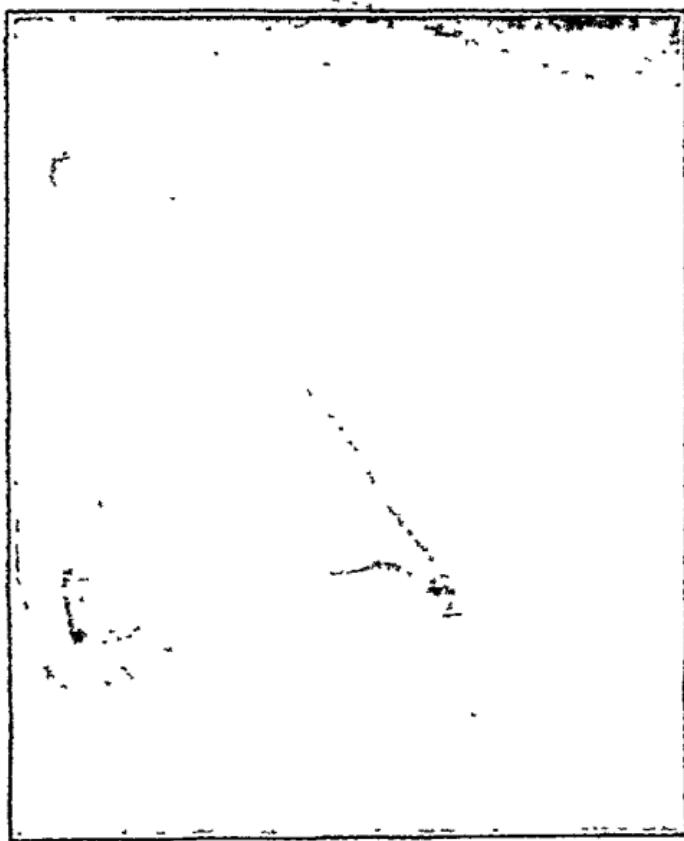
शीर्षासन (प्रथम अवस्था)

शीर्षासन ।

भूमौ शिरश्च संस्थाप्य कर युग्मं समाहितः ।
उर्ध्वपादं स्थिरो भूत्वा विपरीतकरीमता ॥ घे० सं० ३ । ३५

धार्मिक आक्रमणों के प्रतिक्रियारूप शिक्षित समाज का ध्यान जब धर्म के अंतरंग रूप योग की ओर आकर्षित हुआ तो प्रथम इसी आसन से उनका अधिक परिचय हुआ और योग के अन्य आसन अथवा क्रियाओं की अपेक्षा इसी का विशेष प्रचार हो गया। अखबारों में बहुत बार इसकी चर्चा होती है । श्री सातव लेकर कृत आसनों की पुस्तकमें करीव आधी पुस्तक इसी आसन की चर्चा में व्यतीत हुई है । प्राचीन ग्रथों में भी इसको बहुत महत्व दिया गया है । प्राचीन ग्रन्थोंमें इसका नाम विपरीत करणी मुद्रा रखा है । विपरीत करणी मुद्रा का जो वर्णन वहां मिलता है वह शीर्षासन तथा सर्वांगासन दोनोंमें घट सकता है इसीसे कुछ ग्रंथों में सर्वांगासन ही को विपरीत करणी मुद्रा लिखा है । अर्थात् *योग के उपनिषदों में अथवा अन्य योग ग्रंथों में सर्वांगासन और* शीर्षासन के नाम नहीं मिलते । इनका वर्णन जहां है विपरीत करणी मुद्रा के नाम ही से है ।

विधिः—प्रथम घुटने टेक कर वैठ जाओ । एक हाथ की उंगलियां दूसरे हाथ की उंगलियों में फँसाकर हाथ अपने सामने खूब जमा कर रख दो । अब दोनों हाथ के बीच में सिर रखकर, सिर पर बोझ देते हुए पांव खड़े कर दो (देखो चित्र नं० १) ।

ध्यान रहे कि घुटने मुड़ने न पावें। जिनका शरीर कमजोर है; उनको शीर्षासन के इस प्रकार का ही कुछ काल तक अभ्यास करना चाहिये। पश्चात् पैर को धीरे शरीर की ओर खिसकाने से शरीर का भार सिर पर अधिक पड़ने लगेगा और पैर पर शरीर का भार न रहेगा। इस अवस्था में खूब सावधानी से पांव को जमीन से उठाना चाहिये। पांव धरती से उठाने के समय झट-का देकर उनको ऊपर फेंकने का प्रयत्न न करना चाहिये, परन्तु शरीर का तोल सम्हालते हुए उनको धीरे से उठाना चाहिये। जब इस प्रकार आसानी के साथ पैर धरती से उठ जांय, तब उनको चित्र नं० २ में जैसा दिखाया है, उस अवस्था में रखना चाहिये। जब इस अवस्था में दृढ़ता आ जाय तब धीरे २ पांव सीधे करना चाहिये। अन्त में शरीर बिलकुल सीधा रखना चाहिये (देखो चित्र नं० ३) इस आसन में शरीर का सारा भार सिर पर आ जाता है, हाथ का सहारा नाम मात्र का और विशेषतया शरीर का तोल सम्हालने के लिये ही दिया जाता है, इसलिये हाथ पर अधिक भार नहीं देना चाहिये।

इस आसन में मन नासिकाग्र पर जमाना चाहिये।

इस आसन के कई प्रकार इस विषय के अर्वाचीन साहित्य में मिलते हैं; जैसे, शीर्षासन करने पर एक पैर को आगे करना और दूसरे को पीछे; अथवा दोनों ओर दोनों पैर करते हुए पैर और शरीर की (Y) ऐसी आकृति बनाना, इत्यादि। परन्तु हमारे मत से इन प्रकारों से कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता। इतना

चित्र नं० २

शीर्षासन (अवस्था २)

चित्र नं० ३

शीर्षासन

ही नहीं, इनमें से कई प्रकार आसनों के मूल तत्त्व के विरुद्ध हो सकते हैं। तो भी इनका एक प्रकार से उपयोग हो सकता है। यह आसन करने में जिनका एक मात्र उद्देश अपना शरीर सुधार करना ही है, अध्यात्मिक बातों से जो विशेष संबंध नहीं रखते और इसीलिये आसन के समय चित्त को स्थिर नहीं रख सकने से आसन में अधिक समय स्थिर रहना जिनके लिये कठिन हो, वे इस आसन को करते हुए सिर से कमर तक का भाग स्थिर रख कर पैरों को आगे पीछे कर के मन को बहला सकते हैं। इसमें भी यह ध्यान रखना चाहिये कि पैरों को बार २ बदलना न चाहिये, बीच में पर्याप्त समय स्थिर रहना चाहिये। परन्तु बने वहां तक तो कोई भी आसन लगाने के पश्चात् जरा भी न हिला जाय तो बहुत अच्छा है।

इस आसन को साधारण मनुष्य एक मिनट से प्रारम्भ कर सकते हैं। कमजोर मनुष्य पाव, अधा मिनट से अधिक न करे और करते समय बहुत सावधानी रखे। इससे संपूर्ण लाभ उठाने के लिये इसको प्रति दिन आध घंटे से एक घंटे तक करना चाहिये।

जिनका शरीर अधिक बोझल हो अथवा कमजोर हो और इस कारण से जो यह आसन करने में असमर्थ हों उनसे शीर्षासन करवाने की एक युक्ति का श्रीमान् स्वामी कुवलयानंदजी (Editor Yoga Mimansa) ने अन्वेशण किया है। वह युक्ति इस प्रकार है—एक छः, साढ़े छः फुट का लम्बा और दो फुट चौड़ा तख्ता लिया जाय और उसके एक सिरे पर चौड़ाई में छः इंच का

एक खड़ा तख्ता मजबूत जड़ दिया जाय। तख्ते के इस सिरे को दीवार के पास रखकर तख्ता धरती पर बिछाया जाय और आसन करने की इच्छा रखने वाला दीवार की तरफ सिर रखकर इस पर लेट जाय। फिर दूसरा मनुष्य तख्ते का पैर की तरफ का भाग ऊंचा उठावे और उसके नीचे कुछ अच्छा सहारा लगा दे। प्रथम दिन तख्ता धरती से इतना उठाया जाय कि जमीन और तख्ते में १५ अंश का कोण हो जाय। प्रति सप्ताह यह कोण बढ़ाते हुए अन्त में ५० अंश तक का ढाल दे सकते हैं। इस युक्ति से इस आसन को स्वतंत्रता से करने में जो असमर्थ हों ऐसे व्यक्ति भी इस आसन के संपूर्ण लाभ थोड़े बहुत प्रमाण में प्राप्त कर सकते हैं।

शीर्षासन से लाभ।

शरीर स्वास्थ्य सुधारने में यह आसन अपनी प्रतिका एक ही है। नियमितता से इसका प्रतिदिन अभ्यास करने से शरीर में नवजीवन का संचार होता है। शरीर में रहे हुए कितने ही पुराने रोग इसके अभ्यास से दूर हो जाते हैं। प्राचीन योगियों का भी यही अनुभव है जो उन्होंने अलंकारिक भाषा में बहुत ही स्पष्ट रूप से वर्णन किया है। घेरण्ड संहिता में लिखा है कि—

मुद्रेयं साधयेन्नित्यं जरा मृत्युं च नाशयेत्। ॥ घे० सं० ३। ४०

यानी विपरीत करणी मुद्राका जो नित्य अभ्यास करते हैं उनको बुढ़ापा और मृत्यु नहीं प्राप्त होते। अर्थात् इसका अभ्यास

अमृत पान के समान है। नित्य जो इसका अभ्यास करेगा उसकी मृत्यु नहीं होगी। यह अतिशयोक्ति अलंकार है, परन्तु इसका तात्पर्यार्थ किस प्रकार परम सत्य है यह संक्षेप से हम आगे दिखाते हैं।*

वर्तमान काल में शरीर विज्ञान (Anatomy & Physiology) बहुत उन्नत अवस्था को प्राप्त हुआ है। उसके अनुसार भी हम शीर्षासन की मीमांसा करते हैं तो यह आसन शारीरिक स्वास्थ्य के लिये उतना ही महत्व का सिद्ध होता है जितना महत्व उसको अलंकारिक भाषा में प्राचीन योगियों ने दे रखा है। यह आसन समस्त शरीर को किस तरह से लाभ पहुचाता है; इसका संपूर्ण विवरण ग्रन्थ विस्तार भय से हम यहां पर नहीं दे सकते। तो भी पाठकोंको इस विषयकी थोड़ी सी कल्पना देने का हम नीचे प्रयत्न करते हैं।

मानव शरीर रचना का विचार किया जाय तो विदित होगा कि मनुष्य के शरीर में हृदय से लेकर ऊपर के अवयव अत्यंत महत्व के हैं। शरीर का धारण पोषण करने वाला मुख्य धातु रक्त है और उसका आदि स्थान हृदय है। उसके ऊपर कंठ में एक महत्व की ग्रन्थि (Gland) है। शरीर विज्ञानी इसे थायरोइड

---

* इस कथन का अध्यात्मिक अर्थ न लेते हुए हमने केवल स्थूल अर्थ ही लिया है क्योंकि हमें यहां पर उसीसे प्रयोजन था। यहां पर यह भी कहना आवश्यक है, कि यहां अतिशयोक्ति अलंकार केवल शरीरकी अपेक्षा से ही है। अध्यात्मिक दृष्टि से यह अतिशयोक्ति नहीं है, यथार्थ कथन ही है।

(Thyroid) कहते हैं। यह ग्रन्थि शरीर की वृद्धि में, शरीर के धारण करने में तथा उसकी रोग कीटाणुओं से रक्षा करने में अत्यन्त ही उपयोगी होती है। सबसे ऊपर मस्तिष्क (Brain) तथा उसके ऊपर नीचे भी महत्व की ग्रंथियां हैं जो शरीर स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं। इस आसन से इन सब महत्व के अवयवों को नवीन जीवन प्राप्त होता है।

साधारणतः शरीर के जो भाग हमेशा नीचे रहते हैं, इस आसनमें ऊपर हो जाते हैं और ऊपर रहने वाले नीचे हो जाते हैं। इस प्रकार शरीरकी विपरीत स्थिति इस आसन से हो जाती है। यह सब किसी का अनुभव है कि यदि हाथ सिर से ऊंचा उठा कर कुछ देर तक वैसा ही रखा जाय तो हाथ में रक्त की कमी प्रतीत होने लगती है। इससे यह सिद्ध होता है कि शरीर की हमेशा की अवस्थिति से भिन्न प्रकार से यदि शरीर के किसी अवयव को रखा जाय तो गुरुत्वाकर्षण के नियम से उसमें रक्त प्रवाह की न्यूनाधिकता हो जाती है। शरीर के महत्व के सब अवयव जो हमेशा ऊपर रहते हैं इस आसन में नीचे हो जाते हैं और इसी कारण इनमें रक्त का प्रवाह बढ़ जाता है। रक्त में इनकी खूराक होती है इसलिये रक्त में से अधिक खूराक खींच कर ये सब ताजे बन जाते हैं। पेट तथा दूसरे आंतर अवयवों का भार प्रथम जिन स्नायुओं पर था, वे नीचे आजानेसे वह उनपर नहीं रहता, इसलिये उनको भी विश्रान्ति मिल जाती है और वे भी ताजे बन जाते हैं। इस प्रकार शरीर विज्ञान की दृष्टि से

जैसे २ विचार किया जाय, वैसे वैसे इस आसन की उपयोगिता अधिक स्पष्ट होती चली जाती है।

इस आसन से चिरकालिक वद्ध कोष्ठता (Chronic Constipation) शर्तिया दूर होती है। आंतों की दुर्वलता दूर होकर भूख वढ़ जाती है। वद्ध कोष्ठजनित विकार, जैसे कि, अर्श (ववासीर) मधु प्रमेह (Diabetes) आदि भी इस आसन से ठीक हुए हैं। मस्तिष्क (दिमाग़) को यह वहुत ही फायदा पहुंचाता है। इससे दिमाग़ की कमजोरी के कारण होने वाला सिर दर्द, आंखों की जलन, आलस्य आदि सव विकार नष्ट हो जाते हैं। कानमें आवाज उठना, वहिरापन आदि कर्ण रोगों को भी इससे फायदा पहुंचता है। जिनको निद्रा वहुत कम आती है, ऐसे मनुष्य इसका अभ्यास करें तो उनको खूव निद्रा आने लगेगी। गठिया (Rheumatism) को इस आसन से फायदा होने का अनुभव है। ब्रह्मचर्य* की रक्षा में यह आसन परम उपयोगी है। इससे वीर्य संवंधी सव रोग दूर होते हैं और शरीर की कान्ति वढ़ती है। कहां तक लिखा जाय, यहां सव रोगों के नाम लिखने के स्थान पर प्राचीन योगियों का इस आसन विषय का अनुभव ही यहां पुनः प्रथित करना पर्याप्त हैं। वे लिखते हैं "मुद्रेयं साधयेन्नित्यं जरा मृत्युं च नाशयेत्" यानी इस आसन का अभ्यास नित्य नियम से जो मनुष्य करेगा उसको वुढ़ापा या मृत्यु प्राप्त नहीं होगी।

---

* ब्रह्मचर्य के लिये आगे एक स्वतन्त्र प्रकरण होने से यहां पर हम इस विषय में कुछ अधिक लिखना नहीं चाहते।

सर्वांगासन।

विधिः—आसान पर चित्त लेट जाओ। शरीर ढीला छोड़ दो और मन एकाग्र करो। घोंटू कड़े रखकर धीरे धीरे दोनों पांव उठाओ, पांव घोंटू में मुड़ने न पावें। शरीर जमीन से लगा रहें और पांव वृक्ष के समान सीधे खड़े हो जांय (देखो चित्र नं० ३) अब भुजाओं पर वजन देते हुए शरीर ऊपर उठाओ जिससे कि हाथ सीधे जमीन पर रहें, सिर गर्दन तथा पीठ के ऊपर का भाग जमीन पर रहे और सब शरीर खंभे का सा सीधा खड़ा हो जाय। इस अवस्था में विशेष ध्यान इस बात का रखना चाहिये कि गले के नीचे जो एक गढ़ासा होता है उसमें ठोढ़ी जम जाय। कुछ काल तक इसी अवस्था में रहना चाहिये। फिर धीरे से हाथ एक २ करके कोहनीसे मोड़कर कमर के नीचे लगा देने चाहिये, जिससे कि ठोढ़ी छाती से खूब दबे (देखो चित्र नं० ४)।

सर्वांगासन लगाने पर एक पैर धीरे से घुटने से मोड़ कर दूसरे खड़े पैर के जांघ पर लगाओ और उसी प्रकार दूसरे पैर को मोड़ कर दूसरी जांघ पर जमादो (देखो चित्र नं० ६) इसको ऊर्ध्व पद्मासन कहते हैं, परंतु इसके लाभ सर्वांगासनही के समान होने से हमने इसको सर्वांगासन का प्रकार माना है।

जिनका शरीर अधिक बोझल हो या अधिक कमजोर हो, जिसके कारण वे सर्वांगासन न कर सकते हों, परंतु सर्वांगासन करना उनके लिये लाभदायक प्रतीत हो उनको सर्वांगासनके लाभ

चित्र नं० ४
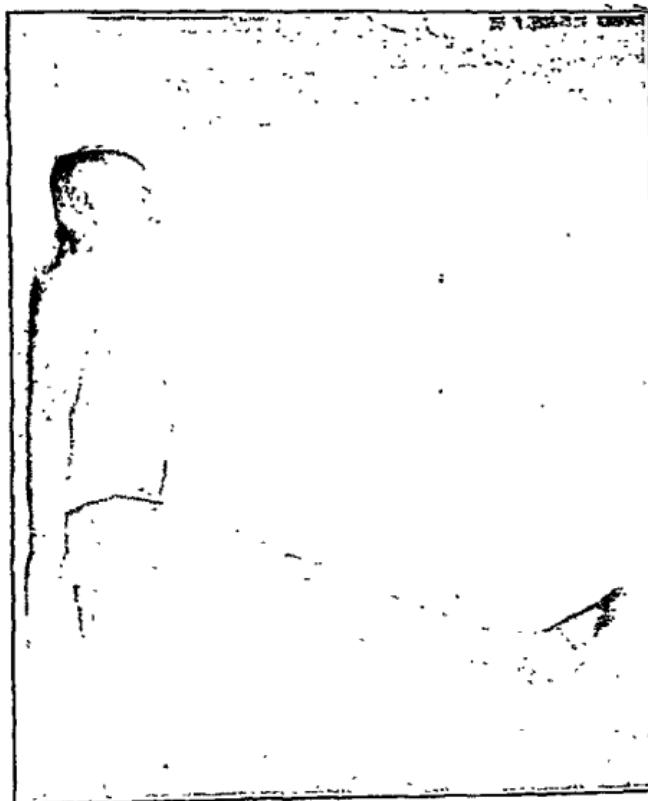
सर्वांगासन (पूर्व अवस्था)
(ऊर्ध्व पादासन)

चित्र नं० ५
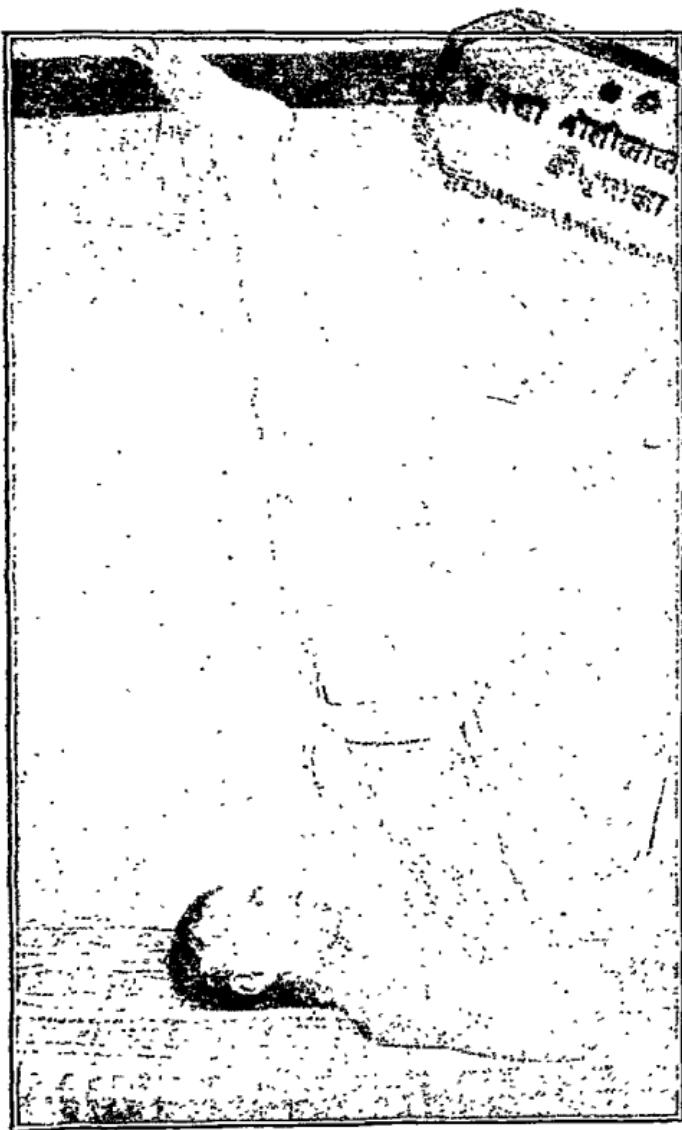
सर्वांगासन

चित्र नं० ६

सर्वांगासन (प्रकार २)

(ऊर्ध्व पद्मासन)

पहुंचाने के लिये श्रीमान् स्वामी कुवलयानंद वही शीर्षासन की सी युक्ति बताते हैं जो शीर्षासन में वर्णन की जा चुकी है। केवल अंतर यह है कि इसके लिये सीधा तख्ता ही काफी है; क्योंकि, इस आसन में सिर और गर्दन धरती पर रहेंगे और सिर गर्दन छोड़ कर और सब शरीर को तख्ते के सहारे से उठाया जायगा। इस युक्ति द्वारा ऐसे मनुष्य भी सर्वांगासन से थोड़े बहुत प्रमाण में संपूर्ण लाभ उठा सकेंगे। इस आसन में दूसरे मनुष्य की मदद भी इतनी आवश्यक नहीं है। प्रथम तख्ता जमाकर मनुष्य उसके आगे उसपर पैर लंबे फैलाकर लेट जाय और फिर धीरे २ तख्ते के ऊपर शरीर को सरकाता जाय ऐसा भी बन सकता है।

श्री० कुवलयानंदजी की युक्ति के अनुसार तख्ते के ऊपर सर्वांगासन लगाने के पश्चात् बन सके तो दोनों पैरों को घोंटुओं में सख्त रखकर धीरे धीरे ऊपर उठाना चाहिये। पैर ऊपर उठाते समय सावधानता रखनी चाहिये, पैर एक साथ बहुत नहीं उठाने चाहिये, नहीं तो शरीर को साध न सकने से गिर जाने की संभावना है। कुछ अभ्यास में स्थिरता आजाने पर कमर का हिस्सा भी ऊंचे उठाया जा सकता है। इस प्रकार कुछ दिनों के अभ्यास के बाद यह आसन स्वतंत्रता से होने लगेगा।

साधारण प्रकृति के मनुष्य इसका एक मिनट से आरंभ करें। अशक्त मनुष्य इस आसन को सावधानी से करें। अशक्त मनुष्य प्रारंभ में पाव आधा मिनिट से अधिक काल तक इस का अभ्यास न करें। अभ्यास दृढ़ होने पर धीरे २ समय

बढ़ाया जाय। लगातार धीरज के साथ अभ्यास करने से अल्प काल ही में यह आसन अच्छी तरह से लगने लगेगा और अभ्यास कायम रखने से स्वास्थ्य सुधार का निश्चित अनुभव होगा। इस आसन से संपूर्ण लाभ उठाने के लिये इसको प्रति दिन आध घंटे से एक घंटे तक करना चाहिये।

सर्वांगासन से लाभ

शरीर के स्वास्थ्य के लिये यह आसन शीर्षासन के समान ही अप्रतिम (लासानी) है। समस्त शरीर पर इसका प्रभाव पड़ता है, इसीलिये इसका नाम सर्वांगासन रखा गया है। यह विपरीत करणी का ही प्रकार है इसलिये विपरीत करणी के सभी गुण इसमें वर्तमान हैं। विपरीत करणी का तत्त्व कायम रखते हुए इस में उसके एक अंश को विशेषता दी गई है। सर्वांगासन में शीर्षासन की अपेक्षा थाइरोइड (Thyroid) पर अधिक असर होता है, यही इसकी विशेषता है। इसलिये जिन रोगों का इस ग्रन्थिके साथ सम्बन्ध है, वे इस आसन से जल्दी दूर होंगे और शीर्षासन के अन्य सामान्य लाभ इसमें भी समान ही रहेंगे।

इस आसन से यकृत, प्लीहा आदि के विकार, चिरकालिक बद्धकोष्ठता (Chronic Constipation) तथा आंतों की कमजोरी दूर होकर भूख बढ़ती है। बहिरापन या कानमें आवाज सुनाई देना इत्यादि कर्ण रोगों पर यह आसन विशेष लाभकारी है। रक्त में रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करने की एक स्वाभाविक शक्ति

होती है। वह शक्ति इस आसनसे बढ़ती है, इसलिये इस आसन का अभ्यास करने से बहुत से रोगों के आक्रमणों से शरीर की रक्षा होगी। रक्त की शक्ति बढ़ने से कठिन से कठिन रक्त विकार जैसे गठिया (Rheumatism) वा नाना प्रकार के कुष्ठ दूर होते हैं। इतना ही नहीं, इस आसन का अभ्यास दीर्घ काल तक दुग्धाहार करते हुए किया जाय तो गलित कुष्ठ (Leprosy) को भी बहुत फायदा देता है। यद्यपि किसी गलित कुष्ठ वाले ने इसका इसविधि से सुदीर्घ काल तक सेवन किया हो यह हमारे जानने में नहीं है, तो भी इस आसन की रक्त की शक्ति बढ़ाने की अद्भुत शक्ति को देख कर हमें निश्चय होता है कि इससे गलित कुष्ठ अवश्य ही समूल नष्ट हो सकता है। मिर्गी वालों (Epileptics) के लिये भी यह आसन अत्यन्त उपयोगी है।

वीर्य रक्षा के लिये भी यह आसन परम उपयोगी है। कुछ काल तक यदि इसका सेवन किया जाय तो बहुतसी बुरी आदतों के भक्ष्य बने हुए मनुष्यों को नया जीवन प्राप्त होगा। शरीर का स्वास्थ्य बनाये रखने की इच्छा रखने वाले प्रत्येक मनुष्य को अपना कुछ समय इस आसन के लिये अवश्य निकालना चाहिये। विशेषतः अध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने वाले साधक को इसका अवश्य अभ्यास करना चाहिये; क्योंकि ऊपर लिखे हुए शारीरिक लाभों के अतिरिक्त इससे अध्यात्मिक उन्नति में भी बहुत सहायता मिलेगी; क्योंकि इससे प्राण की गति उलट जाती है।

मत्स्यासन

विधि:—प्रथम पांव पसार कर बैठ जाओ, फिर दाहिने पांव को घोंटू से मोड़ कर पांव को इस तरह से वाईं जांघ पर रखा जाय जिससे कि तलुआ ऊपर हो जांय। इसी प्रकार बाएं पांव को दाहिनी जांघ पर रखो। अब पीछे झुक कर हाथ की कोहनियां एक एक करके जमीन पर लगाओ और गर्दन को बाहरी बांक देते हुए सिर को भी जमीन पर टेक दो; तालु जमीन से अच्छी तरह से लगा रहना चाहिये। फिर धीरे से दोनों हाथ उठाकर पैर के अंगुठे पकड़लो। अब शरीर के ऊपर के हिस्से का भार सिर पर रहेगा और पीठ को बाहर की तरफ़ बांक रहेगा और जांघें जमीन में लगी रहेगी (देखो चित्र नं० ७)।

प्रारम्भ में मत्स्यासन करते समय यदि घोंटू ऊंचे उठ जांय तो कुछ हर्ज नहीं। इसी प्रकार अभ्यास करते रहने से घोंटू आपही जमीन में लग जांयगे।

यह आसन बड़ी सावधानी से लगाना चाहिये; क्योंकि ज़रासी असावधानी में अधिक हानि होने का संभव है, यह बात आसन का चित्र देखने से ही विदित हो जायगी। स्थूलता वा अशक्तता के कारण जिनका शरीर पर अच्छा काबू नहीं है, वे इस आसन को स्वतंत्रता से न करें। वे अपनी पीठ के पीछे एक छोटासा बिस्तर का लपेटा रख लिया करें और फिर ऊपर लिखी विधि से इस आसन को करें। बिस्तर का लपेटा पीठ के नीचे रखने

चित्र नं० ७

मत्स्यासन

से इसको हर कोई निर्भयता से कर सकते हैं। सर्वांगासन से संपूर्ण लाभ उठाने के लिये यह आसन सर्वांगासन के पश्चात् अवश्य करना चाहिये और सर्वांगासन को जितना समय दिया जाय उससे आधा समय इसके लिये देना चाहिये।

मत्स्यासन से लाभ

यह आसन पानी में किया जाय तो मनुष्य का शरीर बिना हाथ पैर हिलाये पानी पर तैरता है, इसीलिये इसका नाम मत्स्या-सन रखा गया है। सर्वांगासन अधिक काल करने से मेरु दण्ड के ऊपरी भाग के मणि कुछ विचलित हो जाते हैं। किंतु इस आसन में गर्दन को आगे से और पीछे से तनाव पड़ता है इससे वहां के स्नायु मजबूत होकर मेरु दण्ड के मणि भी अपने स्थान में आजाते हैं। इसी लिये इस आसन को सर्वांगासन के पश्चात किया जाता है। इन मणियों का अपने स्थान पर रहना प्राण की नाड़ियों के स्वास्थ्य के लिये कितना उपयोगी है यह हम कहीं आगे लिखेंगे।

हलासन

विधिः—आसन पर चित्त लेट जाओ। हाथ जमीन पर सीधे और शरीर के साथ मिला कर रखो। अब पैर धीरे २ ऊपर उठाओ (देखो चित्र नं० ४)। फिर कमर भी ऊपर उठाओ और सब शरीर एक सीध में लाकर खंभे के समान खड़ा रखो; सिर्फ हाथ सिर तथा पीठ का ऊपर का भाग जमीन पर रहे। इस अवस्था में कुछ सेकंड ठहरो। फिर पैर धीरे धीरे सिर की तरफ झुकाते हुए यहां तक नीचे लाओ कि पैर के अंगूठे जमीन में लग जांय (देखो चित्र नं० ८), घोंटू सख्त रहें।

इस आसन के अनेक प्रकार हैं; उनमें से कुछ महत्व के प्रकार हम नीचे देते हैं।

(१) ऊपर कहे अनुसार हलासन करने के पश्चात् पैर के अंगूठे धीरे से सिर से दूर हटाते जाओ। हाथ अभी तक सीधे थे उनको भी वहां से उठाकर उंगलियां एक की एक में फंसाते हुए सिर के पास इस तरह रखो जिससे कि सिर हाथों के घेरे में आ जाय। फिर पैर के अंगूठे और आगे सरकाओ।

(२) हलासन करके धीरे से हाथ को उठा कर पैरों की तरफ ले आओ और दोनों हाथ से दोनों पैरों के अंगूठे पकड़ो। (देखो चित्र नं० ९)

(३) उपरोक्त हलासन करके कमर को पीछे तथा नीचे दबाते चले जाओ। और पैर सिर की ओर सरकाते जाओ। पीठ का

चित्र नं० ८

हलासन

चित्र नं० ६

हलासन (प्रकार २)

(पादांगुष्ठासन)
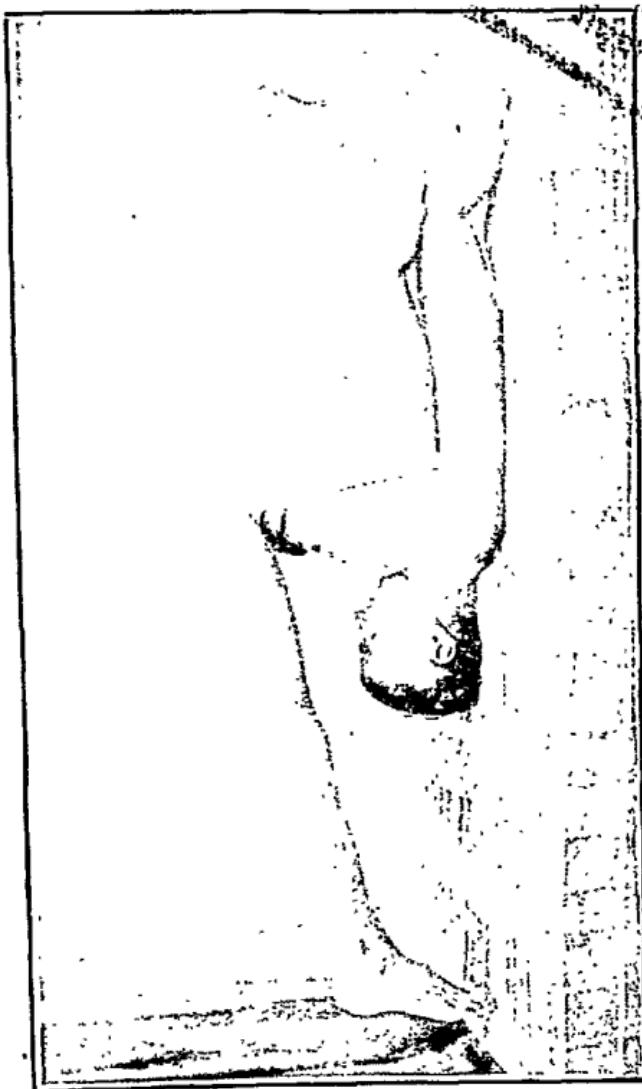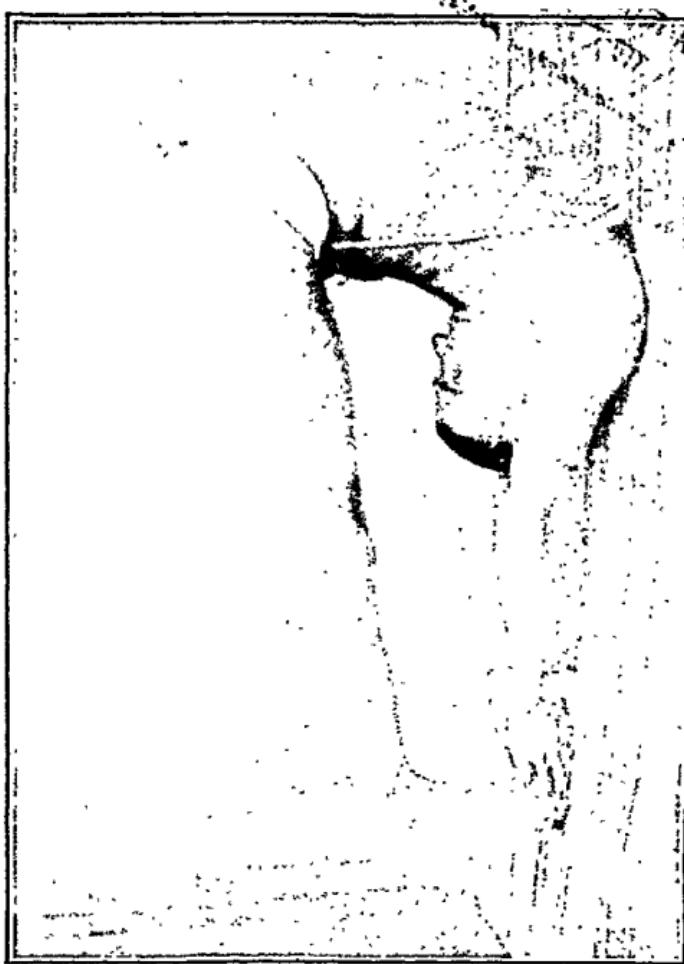
समस्त भाग पहिले बिलकुल सीधा खड़ा था अब उसका बहुत सा ऊपर का भाग जमीन में लगेगा और घोंटू सिर में लगेंगे। हलासन के सब प्रकारों में पांव बिलकुल सीधे रहने चाहिये घोंटुओं से जरा भी मुड़ने न देने चाहिये।

(४) हलासन करके पैर के अंगूठे सिर की ओर सरकाते चलो यहां तक सरकाओ कि जांघें सिरसे लग जांय।

[हलासन के सब प्रकारों के चित्र विस्तार भय से नहीं दिये गये हैं]

इस आसन के करने में यह विशेप रूप से ध्यान रखना चाहियें कि पैर को सिर की तरफ झुकाने में बिलकुल जल्दी न की जाय, परन्तु पैर जितने नीचे उतरे उतने ही स्थिर रख कर समय पूरा करना चाहिये, यह कहने की तो अवश्यकता ही नहीं है कि इसको अत्यन्त अशक्त मनुष्य न करे।

साधारणतः इसका अभ्यास दस से पंद्रह मिनिट तक करना पर्याप्त है। केवल शारीरिक सुधार का उद्देश हो तो इसको लगातार १५ मिनट तक न रखते हुऐ इतने ही समय में इसके सब प्रकार किये जांय तो अधिक लाभदायक होगा।

हलासन से लाभ

सर्वांगासन से होने वाले सभी फायदे कुछ अल्प प्रमाण में इस आसन से भी होते हैं; क्योंकि दोनों आसनों में साम्यता बहुत है। इसमें भी शरीर के ऊपर के अवयवों में रक्त का प्रवाह बढ़ जाता है। इस आसन का विशेष लाभ यह है

कि इसमें पीठ के स्नायुओं पर तथा उनके साथ साथ मेरु दंड पर अच्छा तनाव पड़ता है और मेरु दंड के मणि, विशेषतया नीचे के, स्थान भ्रष्ट हुए हों तो वे इस आसन से अपने स्थान पर आ जाते हैं अथवा यदि वे जकड़ गये हों तो खुल जाते हैं। इससे मेरु दंड लचीला बन जाता है, जो बात स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्व की है। हलासन के हमने चार प्रकार लिखे हैं; उन प्रकारों को भी हलासन के साथ करने से पीठ के स्नायुओं को बहुत सुन्दर व्यायाम होता है और वे मजबूत बनते हैं। इनका मजबूत होना प्राण नाड़ियों (Nerves) की सुदृढ़ता के लिये अत्यन्त आवश्यक है। पेट के स्नायुओं पर भी इसका अच्छा परिणाम होता है।

पद्मासन

उत्तानौ चरणौ कृत्वा उरुसंस्थौ प्रयत्नतः ।
उरुमध्ये तथोत्तानौ पाणी कृत्या ततो दृशी ॥
नासाग्रे विन्यसेद्राजदंत मूले तु जिह्वया ।
उत्तंभ्य चिवुकं वक्षस्युत्थाप्य पवनं शनैः ॥
इदंपद्मासनं प्रोक्तं सर्वव्याधि विनाशनम् ।*

ह० प्र० अ० १-४५-४७

विधि:—प्रथम पांव लम्बे फैला कर वैठ जाओ। अव दाहिने पैर को घुटने से मोड़ कर उसके पंजे को वांये हाथ से पकड़ो तथा एड़ी को दाहिने हाथ से पकड़ो और दोनों हाथ से उस पैर को उठा कर तलुए को ऊपर की ओर करते हुए वाईं पैर की जांघ पर जमा दो। पैर जमाने के समय उसकी एड़ी ऊपर की ओर और पंजा वाईं तरफ खींचों बाद घोंटू को जमीन पर लगा दो और पंजे को जमा दो। ऐसा करने से तलुआ वहुत अच्छी तरह से ऊपर आ जायगा और घोंटू भी अच्छी तरह से जमीन में जम जायगा। पश्चात् इसी रीति से बांये पांव को उठाओ और दाहिने जांघ पर जमा दो। अव दोनों एड़ियां पास पास आ जांयगी उन पर प्रथम दाहिना हाथ और पश्चात् वायां हाथ, उंगलियां सीधी रखते हुए चित्त रख दो। (पांव की स्थिति के लिये चित्र

---

* अवतरण में तीसरी और चौथी पंक्ति का आसन से सम्बन्ध नहीं है। हठयोग के विशेष अभ्यास में इसका उपयोग होता है।

नं० ११ देखो और हाथ की स्थिति के लिये चित्र नं० १० देखो। कोई कोई हाथ घोंटू पर भी रखते हैं। सिर, गर्दन और पीठ एक रेखा में रखो और पेट को थोड़ा भीतर खींचो। इसी रीति से प्रथम बायां पैर जमा कर बाद दाहिना पैर भी रख सकते हैं।

इस आसन में जब आसन ठीक लगता है दोनों घोंटू तथा जांघें ठीक जमीन में लगी रहती हैं; किसी तरफ न्यूनाधिक वजन नहीं रहता। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि आगे झुक कर घोंटुओं पर भार नहीं डालना चाहिये।

जो मनुष्य शरीर की स्थूलता आदि के कारण पद्मासन नहीं लगा सकते उनको अर्ध पद्मासन लगाना चाहिये। इसके लिये पैर फैला कर बैठो और एक पैर घोंटू से मोड़ कर दूसरे पैर के जांघ में लगादो। एड़ी लिंग के नीचे सीवनी के पास रहे और पंजा जांघ से चिपटा रहे। फिर दूसरा पैर उसी प्रकार उठा कर दूसरी जांघ के ऊपर जैसा पद्मासन में कहा है उस रीति से रखदो। यह आसन सब लगा सकते हैं। पद्मासन के गुण अल्पांश में इसमें भी हैं।

पद्मासन से लाभ

पद्मासन का शरीर स्वास्थ्य पर अच्छा परिणाम होता है। पद्मासन से बद्ध कोष्ठता दूर होकर जठराग्नि प्रदीप्त होती है, वीर्य के दोष निर्मूल हो जाते हैं तथा तत्संबंध की अन्य शिकायतें भी दूर हो

चित्र नं० १०
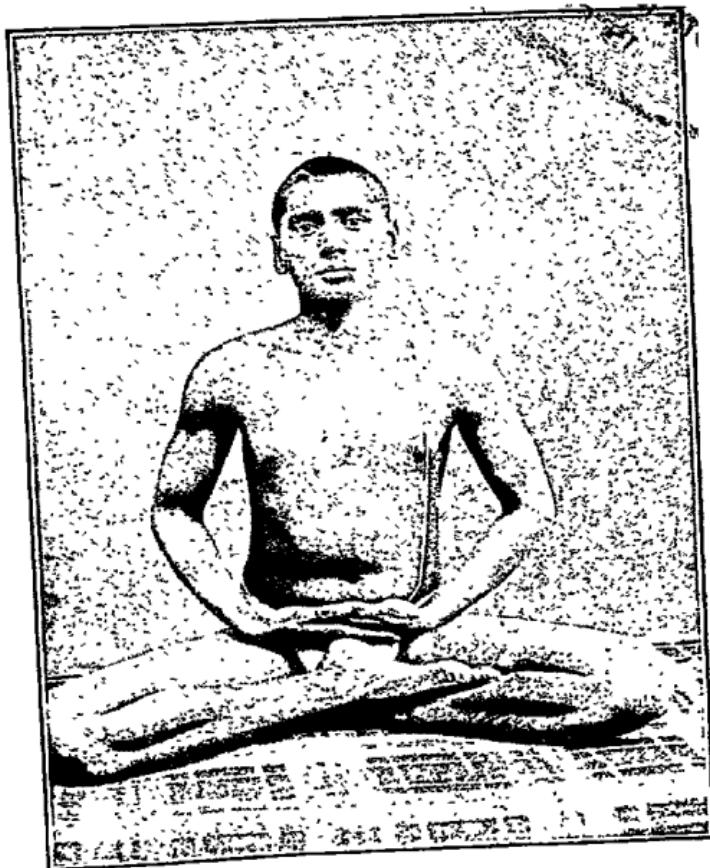
सिद्धासन

जाती है। बुद्धि शुद्ध और तीव्र हो जाती है। पीठ के और पेट के स्नायु मजबूत हो जाते हैं। इसका असर मेरु दंड पर भी पड़ता है। इस आसन में ऊपर का खिंचाव इतना स्वाभाविक होता है कि शुद्ध भाव वाले की ध्यान में बहुत ही शीघ्र प्रगति होती है। इस से मालूम होगा कि यह एक ऐसा आसन है जो शरीर का स्वास्थ्य सुधारने में मदद रूप होते हुये ध्यान के लिये भी अत्यन्त उपयोगी है।

रोग से अथवा अन्य किसी कारण से पैर की हड्डी कभी २ टेढ़ी हो जाती है; अनुभव किया गया है कि अधिक काल तक इस आसन का अभ्यास करने से वह ठीक हो जाती है।

सिद्धासन

योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं कृत्वा दृढं विन्यसेत्।
मेढ्रे पादमथैकमेव हृदये कृत्वा हनुं सुस्थिरम्॥
स्थाणुः संयमितेंद्रियोऽचलदृश्य पश्येद्भ्रुवोरंतरम्।
ह्येतन्मोक्ष कपाटभेद जनकं सिद्धासनं प्रोच्यते॥ ह० प्र० १। ३५

विधिः—प्रथम पांव लम्बे पसार कर बैठो। फिर एक पांव को घुटने से मोड़ कर उसकी एड़ी लिंग के नीचे सीवनी में जमाओ, पैर का तलुआ दूसरे पैर के जांघ में लगा हुआ रहे। यहां पर विशेषतया यह ध्यान रखना चाहिये कि पैर की एड़ी सीवनी के दोनों ओर की हड्डियों को दबाये रहे। फिर दूसरा पैर घोंटू से मोड़ कर, लिंग के ऊपर जो हड्डी है, उसके ऊपर उस पैर की एड़ी अच्छी तरह जमाओ और पंजे का नीचे का भाग दूसरे पैर के जांघ और पिंडली के बीच में घुसेड़ दो। यहां यह विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये कि प्रथम पैर की एड़ी लिंग के ठीक नीचे लगे; बहुत नीचे, यानी गुदा के नीचे, न चली जाय। अथवा दूसरे पैर के नीचे लिंग आदि दब न जाय इसलिये उसको दूसरा पैर जमाने के समय व्यवस्थित जमा लेना चाहिये। दोनों पांव इस प्रकार जमा लेने पर पीठ बिलकुल सीधी करके ठोढ़ी छाती में मजबूती से लगा देनी चाहिये और भ्रुकुटी मध्य में दृष्टि रखनी चाहिये।

ऊपर दी हुई विधि खास हठयोग की है इसलिये सामान्य मनुष्य उसके अन्तिम भाग को न करे यानी ठोढ़ी छाती पर

चित्र नं० ११

पद्मासन

लगाना आदि सबके लिये आवश्यक नहीं है। इसीलिये हमने सामान्य उपयोगी प्रकार ही ग्रहण करके वैसा चित्र दिया है (देखो चित्र नं० १०) जिसमें गर्दन सीधी है।

चित्र में हाथ रखे हैं वैसे न रख कर उनको नीचे लिखे अनुसार घांटूओं पर तने रखना अधिक सुभीते का और विधियुक्त है। हाथ सीधे रखे जाय और केवल हाथ के पंजे का नीचे का भाग घोंटू पर रखकर पंजा सीधा फैलाया जाय, उंगलियां मिली रहे। फिर अंगूठे के पास की उंगली को और अंगूठे को मोड़ कर उगली को अंगूठे के मध्य भाग में लगाना चाहिये। अब अंगूठा और तर्जनी गोलाकार हो जायगी और तीन उंगलियां बिलकुल सीधी रहेंगी। हाथ को इस प्रकार रखने का योगियों ने बड़ा महत्व समझा है और इसीलिये वे इसको 'ज्ञान मुद्रा' कहते हैं।

सिद्धासन से लाभ

सिद्धासन का उपयोग शरीर सुधार के दृष्टि से बहुत कम किया जाता है, यद्यपि शरीर के नीचे के भाग पर इसका अच्छा प्रभाव अवश्य पड़ता है। इस आसन का संबंध जननेंद्रियों के साथ होने से बहुत लोगों का ख्याल है कि इस आसन को अधिक काल तक लगाने से मनुष्य की ये इंद्रियां निकम्मी हो जाती हैं, परंतु इस विषय में किसी का स्पष्ट अनुभव नहीं है। तो भी साधारण मनुष्य इसका अभ्यास एक घंटे से अधिक न करे,

यही अच्छा है, जहां तक कि कोई विशेषज्ञ उनको अधिक काल तक इस आसन के करने को स्पष्ट रूप से न कहे।

यह आसन ध्यान के लिये अत्यंत उपयोगी है। इस प्रकार इसका उपयोग करने वाले दोनों पांव जमाने में जरा भी बल का प्रयोग न करें, उनको आराम के साथ रखें, ऐसा करने से इस से हानि की संभावना नहीं रहेगी और विना कष्ट के वह बहुत देर तक स्थिरतापूर्वक बैठ सकेंगे। इस आसन में शरीर के अवयव पर जोर नहीं पड़ता, इसलिये ध्यान करने वाले का चित्त शरीर पर से जल्दी हट जाता है जो बात ध्यान के लिये अत्यंत महत्व की है इसी भाव से इसको मोक्षदायक कहा है।

भुजंगासन

अंगुष्ठनाभिपर्यन्त मधोभूमौविनिन्यसेत् ।
करतलाभ्यां धरां धृत्वा ऊर्ध्व शीर्षः फणीवहि ॥
देहाग्निर्वर्धतेनित्यं क्षयरोग विनाशनम् ।
जागर्ति भुजगी देवी साधनात् भुजंगासनम् ॥

घे० सं० २ । ३६-३७

विधिः—प्रथम पेट के बल लेट जाओ, फिर पंजे जमीन पर रखते हुए दोनों हाथ छाती के दोनों तरफ खड़े रख दो । फिर पहिले सिर पीछे गर्दन, पीछे गला, पीछे छाती और सबसे आखिर पेट, इस क्रम से शरीर को धीरे धीरे जमीन से ऊपर उठाते जाओ । शरीर को फन निकाल कर खड़े हुए सांप की सी आकृति आ जायगी । इस आसन में मेरु दंड के मणि ऊपर से नीचे तक क्रम क्रम से पीछे की ओर मुड़ते हैं जिससे कि अन्त में मेरु दंड में काफी बांक आजाता है । पैरों को बिलकुल सीधे रखने चाहिये, पैर के पंजे भी बने वहां तक जमीन में चिपटा देने चाहिये । हाथ सीधे करने की आवश्यकता नहीं है; शरीर को नाभि तक उठाने में साधारण सहारा देने के लिये आवश्यक उतने ही उनको सीधे करने चाहिये । (देखो चित्र नं० १२)

भुजंगासन से लाभ

इस आसन के अभ्यास से जठराग्नि तीव्र हो जाती है, भूख बढ़ जाती है, मंदाग्नि बद्धकोष्ठता तथा उससे उत्पन्न होने वाले

रोग दूर हो जाते हैं। विशेष रूप से यह आसन प्राणशक्ति (Vitality) को बढ़ाने वाला है इससे क्षयरोग दूर हो जाता है ऐसा प्राचीन योगिओं का मत है। प्राण शक्ति की वृद्धि होने से भी शरीर के सब धातुओं में रोग से मुक़ाबला करने की शक्ति बढ़ जाती है और यह शक्ति ही क्षय रोग को दूर करने में समर्थ होती है। इससे कुंडलिनी शक्ति को जागृत करने में भी मदद मिलती है। इस आसन से पेट तथा पीठ के स्नायु मज-बूत हो जाते हैं। जिनका पेट बढा हुआ हो, ऐसे मनुष्य यदि इस आसन को नियम से करें तो उनका पेट अवश्य ही घट जायगा। इस आसन में मेरु दंड बाहर की ओर बहुत मुड़ता है, यह भी स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त उपयोगी है।
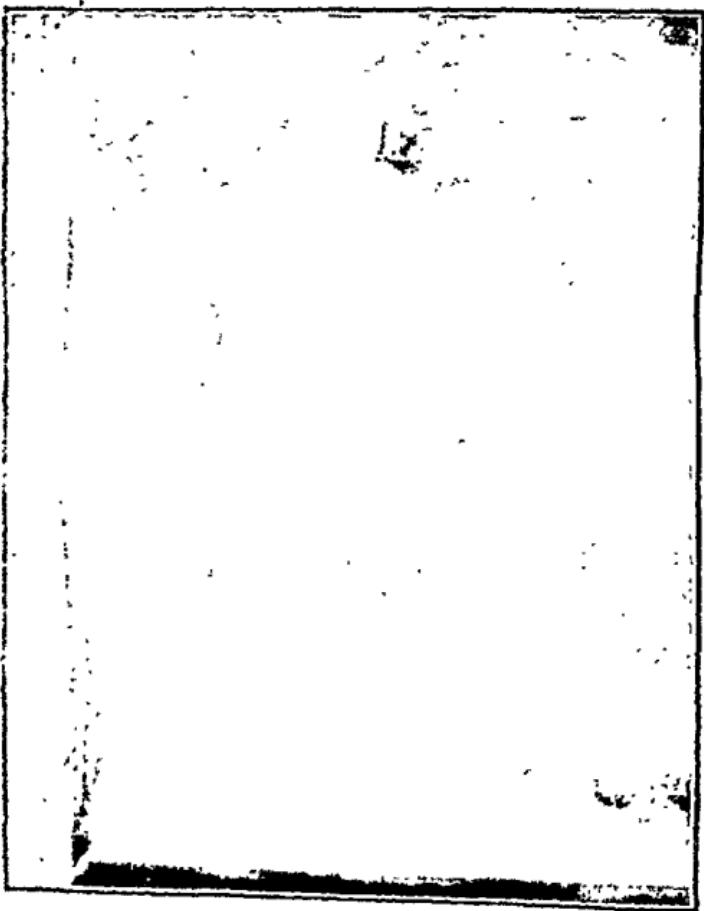
चित्र नं० २६
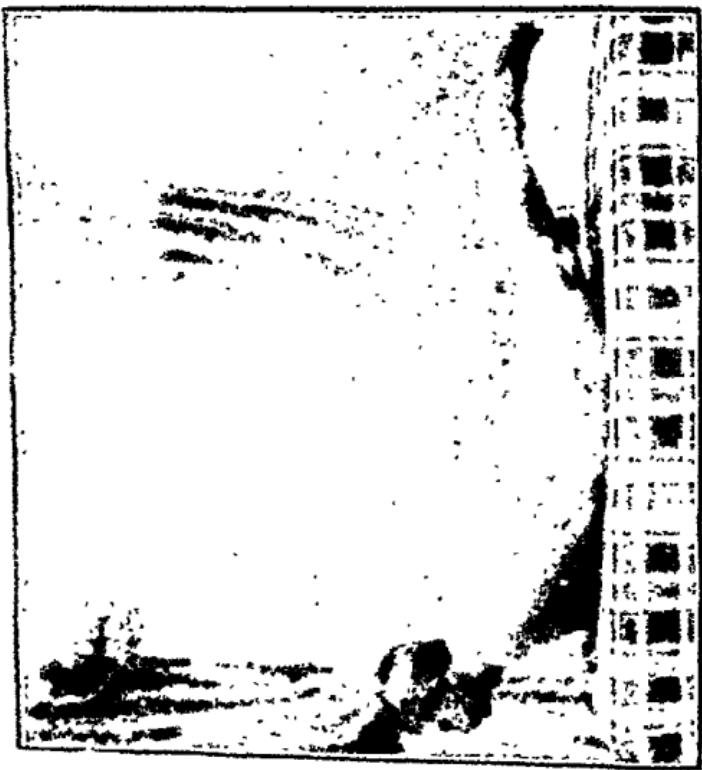
शलभासन

विधिः—प्रथम पेट के बल सो जाओ। मुट्ठियां बांधकर हाथों को शरीर से मिलाते हुए सीधे रखदो। फिर हाथों पर वजन डालकर उनका कुछ सहारा लेते हुए दोनों पैर ऊपर उठाओ, पैर बिलकुल सीधे रहने चाहिए, घुटनों से मुड़ने न चाहिये। पैर के पंजे भी पीछे खींचकर पैर की सीध में लाने का प्रयत्न करना चाहिये। इस प्रकार करने से पैर जमीन से फुट डेढ़ फुट ऊंचे उठ सकते हैं। पैर उठाने के साथ साथ ही सिर तथा छाती भी ऊंची उठानी चाहिये (देखो चित्र नं० १३)।

हाथ लम्बे न रखते हुए कोई २ भुजंगासन में जिस प्रकार छाती के पास रखे जाते हैं वैसे रखते हैं (देखो चित्र नं० १२)। इस प्रकार हाथ रखने से आसन करने में हाथ का सहारा कम मिलता है।

शलभासन से लाभ

शलभासन से पीठ पेटके तथा जांघके स्नायु मजबूत हो जाते हैं। इस आसन के अभ्यास से बद्ध कोष्ठता दूर हो जायगी। और तज्जनित रोग भी दूर होजायंगे।

धनुरासन

विधिः—प्रथम पेट के बल सो जाओ। फिर दोनों पैर मोड़कर हाथ को पीठ पर लेजा कर पैरों के पहुँचे पकड़ लो। फिर धीरे धीरे सिर तथा छाती को ऊपर उठाओ और साथ ही हाथके खिंचाव से घोंटू भी ऊपर उठाते जाओ। अब सिर से घोंटू तक ठीक धनुष की तरह एकसा बांक आ जायगा, हाथ बिलकुल सीधे रहने चाहिये। इसमें केवल पेट तथा कमर धरती पर रहते हैं और सब शरीर अधर होजाता है (देखो चित्र नं० १४)।

यह आसन पाव घन्टे से आधे घन्टे तक करना पर्याप्त है।

धनुरासन से लाभ

इस आसनमें पूर्व लिखित भुजंगासन और शलभासन दोनों का मेल है। दोनों का मेल होने पर भी दोनों के जो अलग अलग लाभ हैं करीब वे सब लाभ अधिकता से इस आसन में वर्तमान हैं। इस आसन को सब कोई सुलभता से नहीं कर सकता इसलिये जो इसको न कर सके प्रथम भुजंगासन और शलभासन ही का अभ्यास करे।

इस आसनमें पेटपर ही सब शरीरका बोझ आता है, परिश्रम का केंद्र भी वहीं है और इससे शेष भाग ऊंचाई पर रहता है। इन सब कारणों से रक्त प्रवाह बड़ी जोर से पेट की तरफ जाता है।

चित्र नं० १४

धनुरासन

छाती खूब फैली हुई रहती है और श्वासोच्छ्वास की क्रिया पर किसी प्रकार की रोक न होने से बहुत शुद्ध रक्त इस ओर जाता है। पेट की तरफ रक्त का प्रवाह जाते हुए भी पेट का सब भाग दबा हुआ होने से वहां रक्त की गुंजायश नहीं होती अर्थात् यह सब रक्त पीठ की तरफ जाता है। प्राण नाड़ियों (nerves) की मुख्य शाखायें मेरुदंड से निकली हैं, जो पीठही में होता है, इसलिये इस आसन में प्राण नाड़ियों को नव जीवन प्राप्त होता है। प्राण नाड़ियों को नव जीवन प्राप्त होना ऐसा है, जैसा पेड़ के जड़ोंमें पानी देना; क्योंकि शरीरकी सब क्रियाएं ऐच्छिक अथवा अनैच्छिक (जैसे अन्न का पाचन, दिल की धड़कन आदि) सब इन प्राण नाडियों ही के अधीन हैं। जैसे हलासन में मेरु दंड को भीतरी गोलाई मिलती है, इस आसन में वाहरी गोलाई मिलती है और इस प्रकार मेरु दंड को लचीला करने में यह आसन उपयोगी होता है।

इस आसनसे पेटके समस्त दोषोंकी निवृत्ति होजाती है और जठराग्नि प्रदीप्त होती है तथा प्राणशक्ति (Vitality) बढ़ती है जिसका शरीर स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव पड़ता है। पेट पीठ हाथ जांघ आदिके स्नायुओंपर खूब तनाव पड़ता है इसलिये वे मजबूत बनते हैं। इससे क्षय रोग निवृत्त होजाता है यदि ऐसा रोगी धीरे २ यह आसन कर सकता हो तो सावधानता पूर्वक इस आसन का दीर्घ काल तक नियम से सेवन करे तो उसको अवश्य फायदा होगा। इस आसन से जलोदर अवश्य दूर हो जाता है।

सुप्त पद्मासन ।

विधिः—पहिले लिखा है उसके अनुसार पद्मासन लगाओ फिर पीछे झुक कर एक एक करके दोनों कोहनियां जमीन में लगा दो । फिर सिर जमीन में लगा कर धीरे से लेट जाओ । पीठ का नीचे का भाग जमीन से अधर रहेगा और ऊपर का भाग जमीन से लगा रहेगा और पद्मासन भी जमीन में लगा रहेगा । अब हाथ मोड़ कर सिर पर रख दो और एक हाथ से दूसरे हाथ की बांह पकड़लो (देखो चित्र नं० १५) । इस आसन में यदि प्रथम दिवस पद्मासन जमीन से उठ जाय तो कोई बात नहीं । वैसा ही आसन लगाते रहने से वह आप ही जमीन में लग जायगा ।

सुप्त पद्मासन से लाभ ।

इस आसन से भी पानी पर विना हाथ पैर हिलाऐ ठहर सकते हैं, इसलिये इसको भी कोई मत्स्यासन ही नाम देते हैं; परन्तु पूर्व में दिये हुए मत्स्यासन में और इसमें बहुत अन्तर होने से हमने इसको मत्स्यासन का प्रकार नहीं माना है । इस आसन से पेट की स्थूलता जल्दी दूर होगी तथा पेट के अन्य विकार भी दूर होंगे । ब्रह्मचर्य संबंध में भी यह आसन उपयोगी है ।

चित्र नं० १५

सुप्त पद्मासन

(मत्स्यासन भिन्न प्रकार)

चित्र नं० १६

तोलांगुलासन

तोलांगुलासन ।

विधि:—पद्मासन लगाकर लेट जाओ । हाथों की मुट्ठियां बांध कर कमर के नीचे लगा दो, जिससे पद्मासन ऊंचा हो जायगा । अब सिर तथा पीठ का ऊपर का भाग भी जमीन से ऊंचा उठाओ । पद्मासन को नीचे दबाने से ऊपर का शरीर ऊंचा रखने में सहायता मिलेगी । अब ऊपर के शरीर का भार कोह-नियों पर रहेगा कोहनियों से आगे पूरा हाथ जमीन को चिपट रहेगा । (देखो चित्र नं० १६) इस आसन का अभ्यास २० से ३० मिनट करना ठीक है ।

तोलांगुलासन से लाभ ।

इस आसन में भुजंगासन से उलटी तरफ खिंचाव पड़ता है जो मेरु दंड को लचीला बनाने में उपयोगी है । इसमें गर्दन के पीछे के स्नायु भी ऊपर खींचते हैं इसलिये वेदृढ़ होजाते है तथा गर्दन के पीछे रहे हुए ब्रह्मनाड़ी के उद्गम स्थान को अधिक रक्त प्रवाह जाने से उसको भी नवजीवनप्राप्त होता है । इस दृष्टि से देखा जाय तो यह आसन स्वास्थ्य के लिये बहुत महत्व का है ।

अर्ध मत्स्येन्द्रासन

विधिः—प्रथम पैर लम्बे फैला कर उनको मिला कर बैठो। फिर दाहिने पैर को घोंटू से मोड़ कर उसकी एड़ी सीवनी में लगा दो। एड़ी गुदा के ऊपर दो अंगुल रहे। एड़ी के ऊपर बैठना भूल है, वैसा कभी भी न होने देना चाहिये। एड़ी ठीक जमाने से पंजा बाईं जांघ में चिपट जायगा। अब दूसरा पैर उठा कर उसको दाहिनी जांघ के पीछे खड़ा करदो। पश्चात् दाहिना हाथ घुमा कर घोंटू के पीछे डाल दो और बांह से घोंटू दाहिनी ओर खूब दबाओ, जिससे कि शरीर का ऊपर का सब भाग बाईं तरफ मुड जावगा। फिर दाहिना हाथ लम्बा कर के उससे बाएं पैर का अंगूठा पकड़लो; ऐसा करने से घोंटू बाहसे छूट नहीं जायगा। पश्चात् बाएं हाथको पीठ के पीछे से घुमा कर दाहिनी ओर लाते हुए उससे जांघ पकड़ने का यत्न करो। अन्त में सिर को भी बाईं ओर घुमाओ, जिस से कि ठोडी कन्धों की सीध में आजाय। इस आसन में इस बात का विशेप ध्यान रखना चाहिये कि शरीर को घुमाने में छाती नीचे न दब जाय, छाती हमेशा निकलती ही रहनी चाहिये (देखो चित्र नं० १७)।

ऊपर लिखे हुए क्रम से दाहिने पैर के स्थान पर बायां पैर लेकर इस आसन को दुबारा करना चाहिये, जिससे कि शरीर दाहिनी तरफ मुड़ेगा। जितने काल तक दाहिनी तरफ का आसन किया हो उनता ही काल दूसरी तरफ के आसन के लिये देना चाहिये।

चित्र नं० १७

अर्ध मत्स्येन्द्रासन

शारीरिक स्वास्थ्य के लिये यह आसन एक दो मिनट करना ही पर्याप्त है।

अर्धमत्स्येंद्रासन से लाभ

अर्धमत्स्येंद्रासन का सम्बन्ध प्राण नाडियों से विशेष है और इसीलिये प्राण नाडियों के आधार रूप मेरुदंड को घुमाना ही इस आसन का मुख्य उद्देश्य है। मेरुदंड के मणि खुले रहें तथा योग्य स्थान पर रहें, यह बात प्राण नाडियों के लिये और उनके द्वारा सब शरीर के लिये अत्यन्त हितकारी है। मेरुदंड का इस प्रकार रहना कितना और किस प्रकार महत्व का है, इस की पाठकों को एक सामान्य कल्पना देने का नीचे प्रयत्न किया जाता है।

शरीर के सबसे ऊपर के भाग में मस्तिष्क (दिमाग़) होता है, उसमें से मुख्य प्राण नाड़ी निकलती है और गले के पीछे होकर वह मेरुदंडमें जाती है। मेरुदंड इस (ഗ) आकृतिके प्रायः ३२ मणियों का बना होता है, इसी लिये हमारी पीठ हम चाहें जैसी मोड़ सकते हैं। नित्य प्रति भिन्न भिन्न प्रकार की शारीरिक क्रियायें करते समय यह मेरुदंड नाना प्रकार से मुड़ता रहता है। परन्तु किसी कारण वश इसके कुछ मणि दीर्घ काल तक एक ही अवस्था में रहें तो वे जकड़ जाते हैं। मेरुदंड में प्राण की मुख्य नाड़ी रहती है और उसके मणियों में से उनके दोनों तरफ प्राण नाडीकी शाखाएं निकली हैं। इन शाखाओं की उपशाखाएं भी इन मणियोंके पास से ही निकलती

हैं। उपशाखा निकलने का यह स्थान ही इन उपशाखाओं का एक छोटा सा स्वतंत्र कार्यालय हो जाता है। शरीर के धारण क्रिया के बहुत से कार्य इसी कार्यालय के सुपुर्द होते हैं। जब यहाँ के स्नायु आदि सख्त हो जाते हैं, तब यहां की प्राण की नाडियां तथा उनको रक्त पहुंचाने वाली नाडियां दब जाती हैं और उनके कार्य में बाधा पहुंचती है। जब मेरुदंड लचीला रहता है तो यहां कीं नाड़ियां भी शुद्ध रहती हैं और शरीर का रक्षण पोषण करनेमें समर्थ होती हैं; अर्थात् शरीरका स्वास्थ्य अधिकांश में मेरुदंड के सुस्थिति पर निर्भर है इस में सन्देह नहीं है।

इस आसन में मेरुदंड को दाहिनी और बाईं ओर बहुत अच्छी तरह से घुमाया जाता है और उस तरफ के स्नायु खूब खिंचते हैं। इस लिये आसन काल में तथा पश्चात् भी बहुत काल तक इस भाग में रक्त का प्रवाह अधिक वेग से चलता है और मणियों में से निकलने वाली प्राणनाडियों की शाखाओं की जडों में नवजीवन अर्पण करता है। केवल पीठ के ही नहीं, शरीर के ऊपरी भाग के सभी स्नायु इस आसन में तनते हैं, इस लिये वे सब मजबूत और ढीले होजाते हैं। विशेष रूप से पेट के स्नायु इस आसन से मजबूत होते हैं, इसलिये परिणाम रूप से पेट के विकारों को लाभ पहुंचाते हुए यह आसन उनको सुस्थिति में रखता है।

मयूरासन

अवष्टभ्य धरां सम्यक्तलाभ्यांतु कर द्वयोः ।
हस्तयोःकुर्परो चापि स्थापयेन्नाभि पार्श्वयोः ॥
समुन्नतशिरःपादो दण्डव द्व्योम्नि संस्थितः ।
मयूरासन मेतत्तु सर्वपापप्रणाशनम् ॥

शांडिल्योपनिषत् १–११

विधिः—प्रथम घोंटू को जमीन पर दूर दूर रखते हुए पैर के पंजे टेक कर एड़ियों पर बैठ जाओ। फिर आगे झुक कर दोनों हाथ अपने सामने जमीन पर रखो। दोनों हाथ में अन्तर बहुत नहीं रखना चाहिये तथा हाथ के पंजे पीछे करने चाहिये। पंजे आगे या बाहर की तरफ नहीं करने चाहिये क्योंकि इस आसन में पेट पर दबाव डालना मुख्य प्रयोजन है और वह प्रयोजन हाथ के पंजे पीछे करने ही से सिद्ध होता है अन्यथा नहीं, इस बात का सब अनुभव कर सकते हैं। हाथ के पंजे पीछे करने पर आगे झुक कर कोहनियां नाभि के दोनों ओर लगादो। अब सिर तथा छाती को आगे जमीन की ओर दबाओ और धीरे से तोल सम्हालते हुए पैर के पंजे उठाने का प्रयत्न करो। खूब सावधानी रखते हुए पैर उठाना चाहिये, झटका नहीं देना चाहिये; नहीं तो एक साथ शरीर आगे निकल जायगा तो फिर उसको साधना कठिन होगा, और गिर जाने से शरीर में चोट आ जाना संभव है। प्रथम कुछ दिन इसी प्रकार धीरे से पैर

के पंजे उठा कर हाथ की कोहनियों पर शरीर का वजन सम्हालने का अभ्यास करना चाहिये। यह अभ्यास दृढ़ होने पर धीरे धीरे पैर लंबे करने का प्रयत्न करना चाहिये। जब पैर लंबे होने लग जांय, तब इस बात का ख्याल रखना चाहिये, कि सिर तथा छाती बहुत नीचे न दब जांय। सिर छाती तथा पैर एक रेखा में आजांय तब आसन शुद्ध हुआ समझना चाहिये। इस आसन में दृष्टि सामने रखनी चाहिये (देखो चित्र नं० १८)

यह आसन कुछ कठिन है; परन्तु ऊपर लिखे अनुसार क्रमशः अभ्यास किया जाय तो वह थोड़े ही दिनों में सधने लगेगा। परन्तु यदि प्रथम ही से मयूरासन की अन्तिम अवस्था का अभ्यास किया जायगा तो व्यर्थ समय नष्ट होगा।

इस आसन को ५ मिनिट से १५ मिनिट तक करना चाहिये

मयूरासन से लाभ।

इस आसन में पेट के नीचे हाथ की कोहनियां होती हैं और ऊपर से सब शरीर का भार होता है। शरीर के जितने स्नायु हैं सब खूब खिंचे रहते है। इसमें हाथ के पंजे उलटे और कोहनियां पेट के नीचे होने से हाथ स्वाभाविकता से छाती के नीचे आते हैं और उसको भी दबाते हैं। इन सब कारणोंसे पेटकी तरफ रक्तका प्रवाह जोरका रहता है और पाचन क्रियाके उपयोगी जितनी ग्रंथियां (Glands) हैं उन सबको अधिक रक्त मिलने से वे अधिक बलवान् होती हैं और इसी लिये इस आसन के अभ्यास से पाचन

चित्र नं० १८

मयूरासन
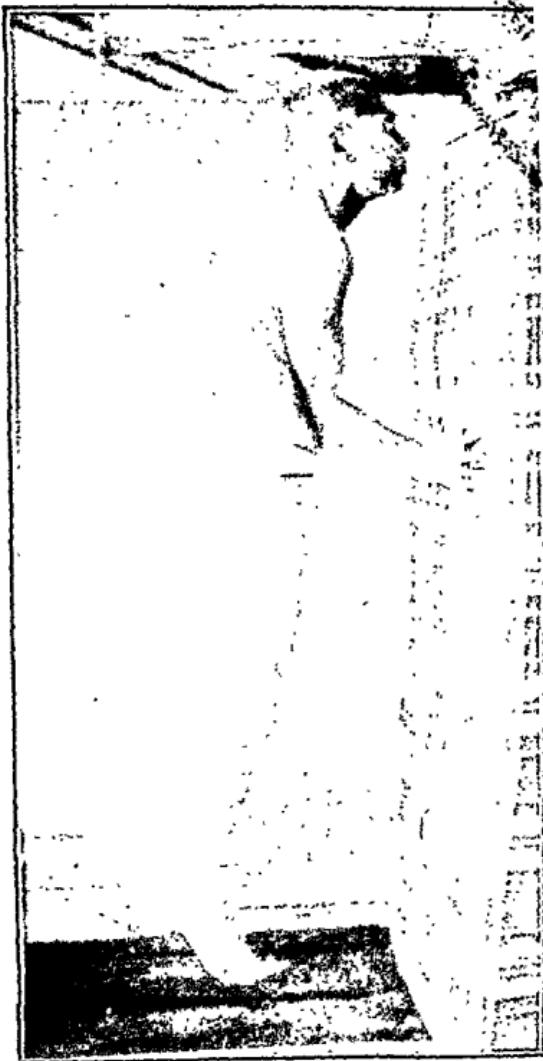
शक्ति बहुत बढ़ जाती है और पेट के भीतर के सब दोष नष्ट हो जाते हैं। प्राचीन ग्रंथों में भी इस आसन के इस गुण में एकवाक्यता है; उदाहरणार्थ योगी याज्ञवल्क्य ने इस आसन के विषय में लिखा है:—

सर्वे चाभ्यंतरा रोगा विनश्यन्ति विषाणि च।

याज्ञवल्क्य अ० ३-१७

पाचनशक्ति बढ़ाने का इस आसन में अद्भुत गुण है, वैसे ही पेट के समान अन्य सब शरीर को भी यह लाभ पहुँचाता है, शरीर के सभी स्नायु इसमें खूब खिंचते हैं इसलिये वे मजबूत और नरम बन जाते हैं। पेट तथा छाती के दबे रहने से गले से लेकर कमर तक के पूरे मेरु दंड को अधिक रक्त प्रवाह मिलता है जिससे वहां की प्राण नाडियां पुष्ट हो जाती हैं जिसका सब शरीर पर सुपरिणाम होता है।

इस आसन को वस्ति क्रिया के पश्चात् किया करते हैं।

जानुशिरासन

विधि:—पैर आगे लम्बे फैलाकर बैठ जाओ। बाएं पांव को घोंटू से मोड़ कर, उसको जांघ की संधि के ऊपर जमादो, एडी ठीक नाभि के सामने आजागी पश्चात् बाएं हाथ को पीठ के पीछे से घुमा कर उस से बाएं पैर का अंगूठा पकड़लो। दाहिने पांव को खूब लम्बा तान कर उसका अंगूठा दाहिने हाथ से पकड़ो। श्वास बाहर निकाल कर पेट भीतर खींचो और आगे झुक कर सब शरीर को बाएं घुटने पर रखदो और बाएं हाथ की कोहनी को बाएं घुटने के पास जमीन पर रखो (देखो चित्र नं० १९)।

जानुशिरासन से लाभ

इस आसन में पेट में रक्त पहुंचाने वाली मुख्य रक्त वाहिनी नाड़ी खूब दब जाती है और पेट में रक्त का प्रवाह कम हो कर वह प्रवाह पीठ की नीचे की तरफ जहां पर विशेष खिंचाव होता है वहां पर पहुंचता है और वहां के प्रदेश को पुष्ठकरता है। पीठ के पीछे हाथ डाल कर पैर का अंगूठा पकड़ने का तथा पसारे हुए पैर का अंगूठा पकड़ने का मुख्य उद्देश पेट पर अधिक भार डालने का ही है। इसमें प्राण की गति भी ऊर्ध्व होजाती है।

जानुशिरासन में आंते खूब दब जाती है इस लिये वे अधिक तीव्रता से कार्य करने लगती हैं। इस के परिणाम रूप पाचन क्रिया बढती है और पेट साफ हो जाता है हाथ पैर के स्नायु खूब खिंचे जाने से वे मजबूत और नरम होजाते हैं।

चित्र नं० १६

चित्र नं० २०

पश्चिमोत्तान आसन

पश्चिमोत्तानासन ।

प्रसार्य पादौभुविदंडरूपौ दोर्भ्यां पदाग्रद्धितयं गृहित्वा ।
जानूपरिन्यस्त ललाट देशो वसेदिदं पश्चिमतानमाहुः ॥
हठ० प्र० १-२८

विधिः—प्रथम पैर लम्बे फैलाकर बैठो । घोटू सख्त रखो दोनों पैर मिलाकर उनको जमीन में बिलकुल चिपटे रखो । अब आगे झुककर दोनों हाथ से दोनों पैर के अंगूठे पकड़ लो; अंगूठों के पकड़ने से पैर जमीन से खूब चिपट जायंगे । फिर कमर से आगे झुककर धीरे से सिर घोंटू पर रखने का प्रयत्न करो । सिर घोंटू पर रखते समय पैर उठने नहीं देने चाहिये, यह बात खास ध्यान में रखनी चाहिये । यदि बने तो हाथ की कोहनियां जमीन पर रखी जा सकती हैं (देखो चित्र नं० २०) ।

यह आसन स्थूल देह वालों से नहीं बनेगा । कई मनुष्य तो पैर फैलाने पर अंगूठे तक हाथ लेही नहीं जा सकते; अंगूठे पकड़ कर घोंटुओं पर सिर रखने की तो बात ही दूर रही ! ऐसे मनुष्यों को भी निराश नहीं होना चाहिये । वे यदि अभ्यास में लगे रहेंगे तो कुछ दिन के पश्चात् इस आसन को लगा सकेंगे । वे प्रथम पैर लम्बे फैलाकर और उनको मिलाकर बैठें । घोंटू सख्त रखकर पैर तथा जांघें जमीन से चिपटे रखें । अब खूब आगे झुकते हुए हाथ आगे बढ़ाकर जहां तक वे पहुँच सकें उसी स्थान पर पैरों को पकड़े रहे । शरीर को झटके देना या उसको अधिक नीचे

अधिक जोर से दवाना सर्वथा हानि कारक है। धीरे धीरे पीठ के स्नायु ढीले होते चले जायंगे और कुछ काल के पश्चात् अंगूठे तक हाथ पहुंच जायंगे। इस प्रकार धैर्य से अभ्यास जारी रखने से समय पाकर यह आसन अच्छी तरह से सधने लगेगा।

शारीरिक लाभ के लिये इसका अभ्यास दो तीन मिनिट करना काफी है। आध्यात्मिक लाभ के लिये इसको एक घन्टे से भी अधिक करना पड़ता है।

पश्चिमोत्तानासन से लाभ।

इस आसन से पेट के स्नायु खूब तनते हैं जिससे जठराग्नि प्रदीप्त होकर पेट के विकार दूर होते हैं। जिनको बद्ध कोष्ठता (कब्जियत) की शिकायत हो, उनके लिये यह आसन परम उपयोगी है। * आध्यात्मिक दृष्टि से यह आसन अत्यन्त ही उपयोगी है। इस आसन के नाम ही से स्पष्ट विदित होता है कि इस आसन के अभ्यास से प्राण पश्चिम मार्ग से गमन करने लगते हैं। इस विषय का प्राचीन साहित्य इसके प्रशंसा से भरा पड़ा है हठयोग प्रदीपिका में लिखा है:—

इति पश्चिमतानमासनाग्र्यं पवनं पश्चिम वाहनं करोति।
उदयं जठरानलस्य कुर्यादुदरे कार्श्यमरोगतां च पुंसाम्॥

ह० प्र० १—२६

---

* इस आसन में उड्डियान करना बद्धकोष्ठता के लिये अत्यन्त उपयोगी है। उड्डियान का वर्णन पुस्तक के अन्त में दिया जायगा।

प्रदीपिका का यह कथन अक्षरशः ठीक मिलता है। जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला और इतना सुलभ ऐसा कोई दूसरा आसन नहीं है, इसीलिये बहुत लोग इसको प्रातः-काल नित्य नियम से करते हैं। जिनका पेट बढ़ा हुआ हो वे इस आसन से अवश्य लाभ उठावें। इस आसन के अभ्यास करने से उनका पेट अवश्य कम हो जायगा।

वज्रासन

विधि:—प्रथम दोनों पैर लम्बे फैला कर बैठो। अब दाहिने पैर को घोंटू से मोड़ कर उसको अपने शरीर के पास इस प्रकार खड़ा करो कि एड़ी बिलकुल जांघ के मूल प्रदेश में रहे और घोंटू जांघ छाती से लगी रहे। पीछे दाहिने हाथ से उसी पैर का पंजा पकड़ कर, शरीर को कुछ ऊंचा उठाते हुए पंजे को पीछे उलटा दो और घोंटू आगे टेक दो। अब पैर तथा उसका पंजा चूतड़ के पार्श्व में चिपटा रहेगा। पैर तथा पंजे पर बैठना नहीं चाहिये; केवल शरीर को ये अंग चिपटे रहें। अब बायां पैर मोड़कर उसके पंजे को भी दाहिने पैर के समान चूतड़ के पार्श्व में जमा दो। अब पैर तथा पंजों के बीच में दोनों चूतड़ रहते हैं पैर के अंगूठे दूर दूर रहते हैं और घोंटू दोनों मिले रहने चाहिये। पैरों को जमा लेने के पश्चात् दोनों हाथ सीधे घोंटुओं पर रखो और पीठ, गर्दन तथा सिर एक रेखा में रखते हुए सीधे बैठ जाओ (देखो चित्र नं० २१)।

दूसरा प्रकार ऊपर लिखे अनुसार पैर चूतड़ के पार्श्व में न लगाते हुए चूतड़ के नीचे आजाते हैं, अर्थात् इसमें पंजे एक के ऊपर एक चढ़ जाते हैं, प्रथम प्रकार के समान दूर दूर नहीं रहते।

इस आसन में घोंटू तथा पैर के टखनों पर अधिक वजन आता है। जिन के ये जोड़ संख्त हुए हों उनको यह आसन

चित्र नं० २१

वज्रासन

सावधानी से करना चाहिये जिससे किसी जोड़ में अधिक दर्द न होने पावे। अभ्यास बहुत धीरे धीरे बढ़ाने से कोई कष्ट नहीं होगा। अभ्यास हो जाने पर इस आसन में बहुत काल तक बैठा जा सकता है।

वज्रासन से लाभ

यह आसन अधिक काल तक बैठने के लिये उपयोगी है। इस आसन से पैर के पट्ठे, और खास करके जांघ के पट्ठे मजबूत हो जाते हैं तथा इनके जोड़ नरम और ढीले हो जाते हैं नीचे के अंगों में रक्त प्रवाह अधिक जाने से जननेन्द्रियों को यह लाभ पहुंचाता है।

कंद के नीचे के भाग को वज्र कहते है यहां पर एक नाड़ी है उसको भी वज्र कहते हैं अथवा कंद ही को वज्र कहते हैं। इस कंद मे बहत्तर हजार नाड़ियां निकलती हैं जो शरीर के सब कार्य करती है। इस भाग पर जो जो आसन असर डालते हैं उन सबको वज्रासन कह सकते हैं। इस न्याय से सिद्धासन पद्मासन, गो मुखासन, मंडूकासन, भद्रासन, कंदपीडनासन आदि सभी आसन वज्रासन ही के प्रकार हैं। यह बात अवश्य कहनी पड़ेगी कि ये सभी भेद अपना २ महत्व रखते हैं। सिद्धासन तो वज्रासन के नाम से भी प्रसिद्ध है।

सुप्त वज्रासन

विधिः—प्रथम लिखे अनुसार वज्रासन करो फिर पीछे झुककर एक हाथ के सहारे से शरीर को सम्हालकर दूसरे हाथ की कोहनी जमीन पर टेक दो। इस कोहनी पर शरीर का भार लेकर दूसरी कोहनी भी जमीन में लगा दो। फिर सिर को टेक कर एक एक करके कोहनियां निकाल दो। घोंटू जमीन पर ही रहें उठने न पावें। पश्चात् सिर को सरकाते हुए पीठ भी जमीन में लगा दो। हथेलियां सिर के नीचे लगा दो आरम्भ में पूरी पीठ जमीन में नहीं लगेगी नीचे का भाग अधर रहेगा। परन्तु कुछ अभ्यास के पश्चात् पूरी पीठ जमीन में चिपट जाया करेगी। (देखो चित्र नं० २२)

दोनों प्रकार के वज्रासन से सुप्त वज्रासन बन सकता है।

इस आसन में घोंटुओं पर वज्रासन से अधिक जोर पहुँचता है इसलिये जब तक वज्रासन ठीक न होगा तब तक इस आसन को करने का प्रयत्न न करना चाहिये।

सुप्त वज्रासन से लाभ

सुप्त वज्रासन में वज्रासन के सभी गुण हैं इस आसन में शरीर को कुछ विश्रांति भी मिलती है इसलिये इसको पर्यंकासन भी कहते हैं। इसका विशेष लाभ यह है कि इसमें पेट के स्नायु खूब खिंचते हैं जिससे आंतें दबती हैं और अधिक जोर से कार्य करती हैं। फलतः इससे पेट के विकार दूर होते हैं।

चित्र नं० २२

पर्यंकासन या सुप्त वज्रासन

चित्र नं० २३

गोमुखासन

गोमुखासन

पादौ च भूमौ संस्थाप्य पृष्ठ पार्श्वे नियोजयेत् ।
स्थिरकायं समासाद्य गोमुखं गोमुखाकृति ॥

घे० सं० २-१४

विधि:—प्रथम पैर मिलाते हुए लम्बे फैला कर बैठो । फिर दाहिना पैर मोड़कर इस प्रकार खड़ा करो जिसमें एड़ी जांघ में लगी रहे और घोंटू छाती के पास रहे । बायां हाथ सहारे के लिये जमीन पर टेक कर दाहिने हाथ से उसी पैर के पंजे को दाहिनी ओर मोड़कर चूतड़ के नीचे रखदो और घोंटू अपने ठीक सामने जमीन पर टेक दो । अब पंजे का एड़ी से अंगूठे तक का भाग जमीन में लगा रहेगा और एड़ी शरीर के नीचे आ जायगी । फिर बाएं पांव को उसी प्रकार बाईं ओर जमादो । अब शरीर का भार विशेष रूप से दोनों एड़ियों पर रहेगा, जो बहुत पास पास होगीं । अब बायां हाथ ऊपर उठाओ और दाहिना हाथ पीठ के पीछे डालकर दोनों हाथ की तर्जनियों के अंकड़े बनाकर एक एक में फंसा दो । (देखो चित्र नं० २३) विशेष ध्यान इस बात का रखना चाहिये कि हाथ पकड़ते हुए शरीर घूम न जाय, परन्तु सीधा रहे अथवा सिर या छाती नीचे न होजाय । ऊपर के हाथ को, जो अब मुड़ा हुआ ठीक सिर के पीछे होगा, पीछे दबाते हुए सिर सीधा रखना चाहिये ।

गो मुखासन और प्रकार से भी किया जाता है * । पहिले लिखा है उस प्रकार वैठकर दाहिने पैर की एडी जांघ में लगाते हुए उसी तरह खड़ा करदो । वाद में उसकी एड़ी वाएं चूतड़ के नीचे लगाकर पंजा वाईं ओर निकाल दो और घोंटू सामने टेक दो । अव वाएं पैर को मोड़कर, वायां हाथ सहारे के लिये जमीन पर टेकते हुए, उसको दाहिने घोंटू के ऊपर से वाईं ओर लाओ और एड़ी चूतड़ के हड्डी के नीचे जमाकर पंजा वाहर की ओर निकाल दो । अव दोनों एड़ियों पर शरीर का भार देकर सीधे वैठ जाओ । फिर वायां हाथ सिर के ऊपर उठाकर दाहिना हाथ पीठ के पीछे डालदो और दोनों हाथ की तर्जनियों के अंकड़े वनाकर एक एक में फंसा दो । यहां भी इस वात का ध्यान रखना चाहिये कि हाथ पकड़ने में शरीर घूम न जाय अथवा सिर अथवा छाती नीचे न दव जाय । वाएं हाथ को सिर से पीछे दवाते हुए सिर सीधा रखो ।

गो मुखासन का यह दूसरा प्रकार कठिन अवश्य है परंतु इसमें लाभ भी अधिक है । साधारण मनुष्य इसको नहीं कर सकेंगे वे प्रथम प्रकार करें और वह भी न वने तो वज्रासन करें । उससे भी वही लाभ थोड़े प्रमाण में होगा ।

गोमुखासन से लाभ

यह आसन वज्रासन ही के गुण रखता है, भेद यही है कि वज्रासन में कुछ स्वाभाविकता और आराम रहता है इसलिये

---

* सव्ये दक्षिण गुल्फंतु पृष्ठपार्श्वे नियोजयेत् ।
दक्षिणेऽपि तथा सव्यं गोमुखं गोमुखाकृति. ॥ ह० प्र० १–२०

वह अधिक देर वैठने के लिये पसंद किया जाता है वह बात इसमें नहीं है। गो मुखासन का हमने जो दूसरा प्रकार दिया है वह पहिले की अपेक्षा अधिक लाभकारी है *। दूसरे प्रकार में पैर इस युक्ति से रखे गये हैं कि पैरों में रक्त का प्रवाह स्वभावतः कम होजाता है। हाथ को इस रीति से रखते हैं कि ऊपर के भाग में रक्त प्रवाह घट जाय। यह सब रक्त कमर की ओर जाता है और जननेन्द्रियों को मजबूत करता है। इसमें पेट के नीचे के भाग पर भी खिंचाव पड़ता है इसलिये बद्धकोष्ठता के लिये भी यह आसन उपयोगी है।

---

* हठयोग प्रदीपिका में दिया हुआ गोमुखासन ही हमको अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होता है। घेरंड संहिता प्रतिपादित आसन में। (जो सरल होने से इस ग्रन्थ में प्रधान रूप से ग्रहण किया है) हाथ की रचना का कोई महत्व ही नहीं है। परन्तु प्रदीपिका में दिये हुए आसन में उसका विशिष्ट महत्व है। हाथ की रचना के विना यह आसन अपूर्ण ही रह जाता है और आसन का नाम ही हाथ की रचना पर निर्भर है। गोमुख एक प्रकार का वाद्य होता है उसके साथ सादृश्य होने ही से इसको गोमुखासन कहते हैं।

वद्ध पद्मासन

वामोरूपरि दक्षिणं च चरणं संस्थाप्य वामं तथा ।
दक्षोरूपरि पश्चिमेन विधिना धृत्वा कराभ्यां दृढ़म् ॥
अंगुष्ठौ हृदये निधाय चिवुकं नासाग्रमालोकयेत् ।
एतद् व्याधि विनाशकारि यमिनां पद्मासनं प्रोच्यते ॥

ह० प्र० १-४४

विधिः—प्रथम पद्मासन लगा कर (देखो पृष्ठ ४१) बैठो। फिर दाहिना हाथ पीठ के पीछे से घुमाकर उससे दाहिने पैर का अंगूठा पकड़ लो। इसी प्रकार बाएं हाथ को पीठ के पीछे से लाकर उससे बाएं पैर का अंगूठा पकड़ लो। ठोड़ी छाती में दबाओ और पीठ बिल्कुल सीधी रखो। दृष्टि नासाग्र रखो ।

वद्ध पद्मासन से लाभ ।

वद्ध पद्मासन वास्तविक पद्मासन का ही एक प्रकार है पद्मासन के सभी गुण इस आसन में विशेष मात्रा में है। परंतु इस आसन का उपयोग पद्मासन के समान ध्यान में नहीं किया जाता। शक्ति को जाग्रत करने के लिये अन्य क्रियायें न भी की जांय तो भी केवल इसी आसन का अधिक काल तक अभ्यास करने से थोड़े वहुत अंश में वही फल मिलता है।

चित्र नं० २४

बद्ध पद्मासन

चित्र नं० २५

गुल्फ जंघासन

गुल्फ जंघासन

विधिः—पैर लम्बे फैला कर बैठो। पीछे बाएं पांव को घुटने से मोड़कर उसकी एड़ी बाईं जांघ में लगाओ और पंजा अपने सामने जमीन पर सीधा रखो। अब दाहिने पांव को भी मोड़ कर उसकी एड़ी दाहिनी जांघ में लगा कर पंजे के ऊपर रखो, दोनों घुटनों को दोनों तरफ ऐसे तने हुए रखो कि वे दोनों एक रेखा में आ जांय। अब दोनों हाथों को तान कर दोनों घुटनों पर इस प्रकार रखो कि उनके पहुंचे घोंटुओं पर रहें और उंगलियां धरती तक पहुँच जांय। पीठ, गर्दन और सिर एक सीध में रखो। दृष्टि अपने सामने रखो (देखो चित्र नं० २५)

गुल्फ जंघासन से लाभ

इस आसन में भी क़मर के भाग में भिन्न प्रकार से रक्त प्रवाह बढ़ाने का उपाय है, इसलिये जननेन्द्रियादि वहां के अवयवों को यह मजबूत बनाता है।

मंडूकासन

पाद तलौ पृष्ठ देशे अंगुष्ठे द्वे च संस्पृशेत् ।
जानु युग्मं पुरस्कृत्य साधयेन्मंडुकासनम् ॥

घे० सं० २-३१

विधि:—प्रथम पैर लंबे फैला कर बैठ जाओ। अब बाएं पैर को मोड़कर एड़ीको जांघ के पास लगाते हुए खड़ा रखो जिससे घोंटू छाती के पास आजाय। अब दाहिना हाथ सहारे के लिये जमीन पर टेक कर बाएं हाथ से पैर को चूतड़ के नीचे इस तरह से जमाओ कि जिसमें एड़ी चूतड़ के पीछे निकल आवे, और तलुआ चूतड़ के नीचे आजाय और घोंटू ठीक बाईं ओर तना रहे। फिर इसी प्रकार दाहिने पैर को लाकर उसके पंजे को प्रथम बाएं पंजे के ऊपर रख कर बाद एड़ी को और घोंटू को जमाओ। अब पंजे एक पर एक थोड़े चढ़े हुए रहेंगे, एड़ियां दोनों चूतड़ के पीछे रहेंगी जांघें आगे रहेंगे और दोनों घोंटू दोनों ओर तने रहेंगे। दोनों हाथ घोंटू पर रखदो (देखो चित्र नं० २६) और पीठ, गर्दन तथा सिर एक सीध में रख कर बैठो। दृष्टि सामने रखो।

मंडूकासन से लाभ

इस आसन से जांघ के भीतरी स्नायु मजबूत और मुलायम होते हैं और इसके गुण वज्रासन के समान हैं।
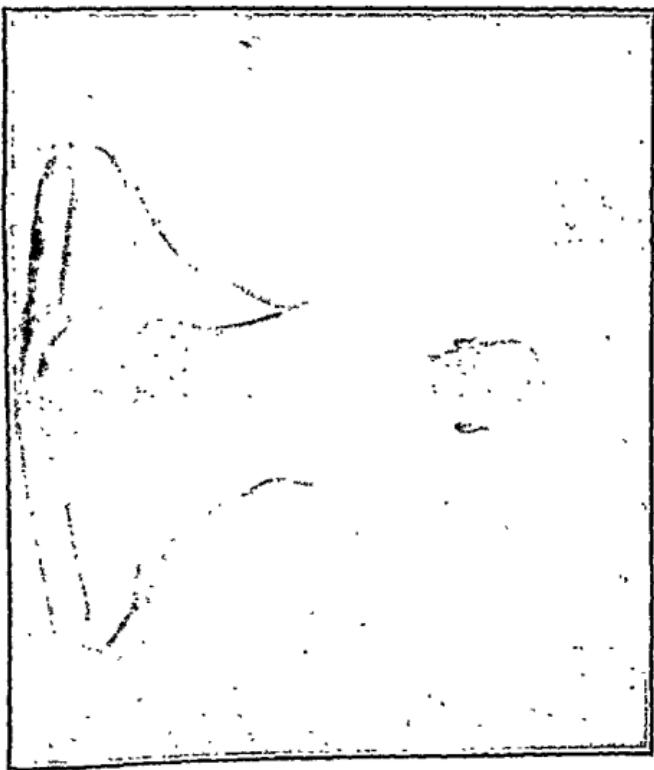
चित्र नं० २६

मंडूकासन

चित्र नं० २७

भद्रासन

भद्रासन

गुल्फौ च वृषणस्याधः सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपेत् ।
सव्यगुल्फं तथा सव्ये दक्ष गुल्फं तुदक्षिणे ॥

ह० प्र० १-५३

विधिः—प्रथम पैर लम्बे फैला कर बैठो। फिर दाहिने पैर को घोंटू से मोड़ कर उसकी एड़ी सीवनी में लगाओ और घोंटू खूब दाहिनी तरफ तानो। इसी प्रकार बांया पैर भी जमा लो। अब दोनों पैरों के तलुए मिले रहेंगे फिर इन मिली हुई एड़ियों पर बैठ जाओ। दोनों पंजे आगे निकले रहें और घोंटू दोनों ओर तने रहें हाथ घोंटू पर रखो और दृष्टि सामने रखो (चित्र नं० २७)

भद्रासन से लाभ

यह आसन खास खास क्रियाओं के साथ किया जाता है। इस आसन में कन्द § पर जोर पड़ता है। इसलिये शक्ति चालन की अन्य क्रियाओं को यह आसन सहायक बनता है। यह आसन प्रत्यक्ष रूप से शरीर को विशेष लाभदायक नहीं है परन्तु कन्द पर असर डालने के कारण वहां निकलने वाली नाड़ियां बलवान् होती हैं।

---

§ कन्द का वर्णन कंदपीडनासन पृष्ठ ७४ में देखो।

कंदपीडनासन

विधिः—प्रथम दोनों पैर फैला कर बैठो। दोनों पैरों को मोड़ कर उनके पंजे मिलाओ। दोनों हाथ से इन मिले हुए पैरों को गट्टों में पकड़ कर नाभि के आगे लाकर इस प्रकार रखो कि एड़ियां नाभि के आगे रहें और मिले हुए अंगूठे नीचे जमीन पर रहें और दोनों घोंटू दोनों ओर खिंचे रहें। अब दोनों हाथ से अंगूठों को धीरे धीरे पीछे खींचो जिससे एड़ियां आगे जमीन में लग जायगी। इस प्रकार से पैर उलट कर उन पर बैठ जाओ। घोंटू दोनों ओर तने ही रहेंगे। अब हाथ घोंटू पर रख कर पीठ, गर्दन और सिर एक रेखा में लाने से आसन पूर्ण हो जाता है।

यह आसन बहुत ही कठिन है इसलिये आसनों का बहुत अच्छा अभ्यास होने के पूर्व इसको करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। क्योंकि बदन अच्छा सधा न हो तो प्रयत्न करने में भी जोड़ों में कष्ट होने की संभावना है।

कन्दपीडनासन से लाभ

यह आसन खास योग का है। योगशास्त्र में शक्ति के आदि स्थान को कंद * कहा है यह कंद गुदा के ऊपर के दो अंगुल से

§ ऊर्ध्व मेढ्रादधो नाभेः कन्दयोनिः खगांडवत् ।
तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्ततिः ॥

गोरक्ष शतक ।

चित्र नं० २८

केद पीड़नासन

लेकर नाभि के नीचे दो अंगुल तक है। यहीं से सब नाड़ियां उत्पन्न होती हैं। इस कंद के पीड़न करने से कुंडलिनी शक्ति जाग्रत होती है इस आसन में कंद पर ही खास दबाव पड़ता है इसलिये यह आसन शक्तिचालन में अत्यन्त उपयोगी है। इस आसन के करते ही देहाग्नि बहुत बढ़ जाती है। पर्यायरूप से इससे सर्व रोग नष्ट होजाते हैं। परन्तु इस आसन का योग साधन के अतिरिक्त अन्य उपयोग नहीं होता।

द्विभुजासन

विधि:—प्रथम पैर फैला कर बैठो, पैर घोंटू से मुड़े हुए जमीन में लगे रहें। अब दाहिने पैर को दाहिनी भुजा पर रखो, बाएं हाथ से उसको ठीक कंधे के पास इस तरह से जमाओ कि घोंटू भुजा पर रहे और पैर आगे लटकता रहे। इसी प्रकार बायां पांव बाई भुजा पर रखो। अब दोनों हाथों में एक बालिश्त का अन्तर रख कर अपने सामने जमाओ और शरीर का तोल सम्हालते हुए धीरे धीरे चूतड़ जमीन से अधर उठाओ। सिर तथा छाती ऊपर उठे रहें; ध्यान इस बात का रखना चाहिये कि चूतड़ उठाने में झटका न दिया जाय, झटका देने से आगे मुंह के बल गिर जाने की संभावना है (देखो चित्र नं० २९)

द्विभुजासन से लाभ

इस आसन से हाथ, भुजा, छाती, पीठ आदि के स्नायु बलवान् होते हैं। पेट में लघुता आ जाती है।

चित्र नं० २६

द्विभुजासन

चित्र नं० ३०

कुक्कुटासन

कुक्कुटासन

पद्मासनं समासाद्य जानूर्वोरन्तरे करौ ।
कुर्पराभ्यां समासीनो मंचस्थः कुक्कुटासनम् ॥
घे० सं० २-२६

विधिः—प्रथम पद्मासन लगा कर बैठो। फिर दाहिना जांघ और पिंडली के बीच में जो जगह रहती है उसमें दाहिना हाथ बलात् प्रवेश करो, पद्मासन को जरा ऊपर उठा दाहिना घोंटू बाएं हाथ से पकड़ रखने से हाथ को प्रवेश कराने में सुभीता रहेगी। फिर इसी प्रकार दाहिना हाथ भी दाहिनी जांघ और पैर के बीच में प्रवेश कराओ। पश्चात् दोनों हाथ के पंजे अपने सामने योग्य अन्तर रख कर जमादो। अब हाथ पर धीरे धीरे झुकाते चले जाओ चूतड़ अधर होने लगेगा। फिर सिर ऊंचा उठाते हुए पीठ जितनी बने उतनी सीधी रखो (देखो चित्र नं० ३०) जिनकी पिंडलियां और जांघें कुछ मोटी हों उनके हाथ पद्मासन लगाने पर जांघ और पिंडली में घुस नहीं सकेंगे, वे आगे लिखे प्रकार से इस आसन को कर सकते हैं।

प्रथम ढीली पालती लगा कर बैठो फिर दाहिना पांव उठा कर दाहिना हाथ उस पांव के और जांघ के बीच में रख कर उस पांव को बाएं हाथ से बाए जांघ पर पद्मासन के समान जमादो बाएं पांव को बाएं हाथ से उठाकर दाहिने जांघ पर रख दो और पश्चात् बायां हाथ जांघ और पिंडली में घुसेड़ दो। अब दोनों

हाथों के बीच में योग्य अन्तर रखते हुए उनको अपने सामने जमादो । पश्चात् हाथ पर झुकते हुए ऊपर लिखे भांति से शरीर को धारण करो ।

इसका एक और भी प्रकार है । उसमें प्रथम उकड़े बैठ कर दोनों हाथ अपने सामने सीधे रखे जाते हैं । फिर छाती आगे झुका कर शरीर का बोझ हाथ पर डालते हुए एक पैर उठा कर उसी तरफ के कोहनी के नीचे लगाया जाता है और दूसरा पैर दूसरी कोहनी के नीचे लगाया जाता है । पैर को ठहराने के लिये पैर *का अंगूठा और तर्जनी से हाथ के स्नायु को पकड़ा जाता है* (देखो चित्र नं० २१) ।

कुक्कुटासन से लाभ

इस आसन में सब शरीर का भार केवल हाथ पर तुला रहता है, छाती के स्नायु भी खूब खिंचते हैं, इसलिये ये भाग मजबूत होते हैं । इन आसनों से हाथ की लम्बाई बढ़ने की भी संभावना है, परन्तु इस विषय का विचार हम आगे गरुडासन में करेंगे ।

चित्र नं० ३१

कुक्कुटासन (भिन्न प्रकार)

चित्र नं० ३२

गर्भासन

चित्र नं० ३३

गर्भमिन प्रकार २

गर्भासन

विधि:—प्रथम कुक्कुटासन में जैसा लिखा है उसके अनुसार दोनों हाथ दोनों तरफ की जांघें और पिंडलियों में से निकाल लो। परन्तु अब की बार बाएं हाथ की कोहनियां भी बाहर निकालनी चाहिये। फिर चूतड़ों पर शरीर का सब बोझ डालकर धीरे से कोहनियों से हाथों को मोड़ कर दाहिने हाथ से दाहिना कान और बाएं हाथ से बायां कान पकड़ना चाहिये। आसन की अन्तिम क्रिया बहुत सावधानी के साथ करनी चाहिये; क्योंकि झटका देकर यदि एक साथ कान पकड़ने का यत्न किया जाय तो शरीर पीछे गिरेगा और उसको सम्हालने के लिये हाथ खुले न मिलेंगे। जब शरीर अभ्यास से सधने लग जाय जब पीठ बिल्कुल सीधी करने का यत्न करना चाहिये (देखो चित्र नं० ३२)

गर्भासन के दूसरे प्रकार में फरक इतना ही किया गया है कि प्रथम हाथों से कान पकड़े थे उसके स्थान में अब दोनों हाथ गर्दन के पीछे डाल कर उनकी उंगलियां एक एक में फंसा दी गई हैं (देखो चित्र नं० ३३)

यह आसन इस प्रकार से यदि न बने तो पद्मासन न लगाते हुए केवल घोंटू के नीचे से हाथ डाल कर ऊपर लिखे अनुसार कान या गर्दन पकड़ने का यत्न करना चाहिये। इसमें दोनों पैर आगे लटकते रहेंगे।

यह आसन १० मिनिट तक करना पर्याप्त है परन्तु इतने ही समय दोनों प्रकार कर लेना चाहिये।

गर्भासन से लाभ

इस आसन के प्रथम प्रकार में बांह के स्नायु खिंचते हैं और दूसरे में हाथ के खिंचते हैं और दोनों में पीठ के स्नायु भी खूब खिंचते हैं इसलिये ये सब स्नायु मजबूत हो जाते हैं।

चित्र नं० ३४

वातायनासन

वातायनासन

विधिः—प्रथम सीधे खड़े होजाओ। दाहिना पांव ऊपर उठाकर दोनों हाथ से उसे बाईं जांघ पर, जैसे पद्मासन में पैर जमाते हैं, वैसे ज़मादो। पैर की एड़ी नाभि के जरा नीचे रहे और पंजे का पृष्ठ भाग जांघ से चिपटा रहे। अब कमर के ऊपर का भाग सीधा रखते हुए बाएं पांव को बाईं तरफ मोड़ कर दाहिने घोंटू को नीचे लेते चले जाओ। अन्त में दाहिना घोंटू बाएं पांव पर जो अब टेढा हो रहा है धर दो; दाहिनी जांघ बिल्कुल खड़ी रहे और पैर जहां के तहां बने रहें। फिर दोनों हाथ जोड़कर छाती के आगे रखो (देखो चित्र नं० ३४)

इस आसन को पैर बदल कर दुबारा करना चाहिये। दोनों प्रकार मिलाकर ५ मिनिट देना इसके लिये पर्याप्त है।

वातायनासन से लाभ

इस आसन में शरीर को एक पैर पर सम्हालना पड़ता है। इसलिये पैर के और जांघ के स्नायु इससे मजबूत होजाते हैं। शरीर को सम्हालने में श्वासोच्छ्वास स्वाभाविकता से दीर्घ और परिमित होजाते हैं जो फेफड़ों के स्वास्थ्य के लिये तथा रक्त की शुद्धि के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

गरुड़ासन

विधिः—प्रथम सीधे खड़े होजाओ। फिर बायां पैर सीधा रखते हुए दाहिने पैर को उठा कर बाएं पैर के ऊपर इस प्रकार लपेटो कि दाहिने पैर का घोंटू बांए पांव के घोंटू के ऊपर रहे और दाहिना पैर बाएं पैर के पीछे से घूम कर उसके पंजे का कुछ भाग दाहिने पंजे के ऊपर आजाय। दाहिना पंजा यदि बाएं पंजे के ऊपर तक न पहुँचे तो दाहिना घोंटू एक हाथ से पकड़ कर दूसरे हाथ से धीरे से बाएं घोंटू को दाहिनी ओर दबाने से वह बैठ जायगा। अब शरीर को खूब सम्हाल कर दाहिना हाथ बाएं हाथ के ऊपर रख कर दोनों हाथों को लपेटते हुए उंगलियों को गरुड़ की चोंच की सी आकृति में बना कर उसको अपने मुख के आगे रखो (देखो चित्र नं० ३५)। इसी प्रकार दाहिने पैर को सीधा रखते हुए बाएं पैर को उस पर लपेट कर हाथ की आकृति गरुड़ की चोंच की भांति बना दो।

गरुड़ासन से लाभ

गरुड़ासन में सब शरीर का भार एक पैर पर आजाता है। एक पैर पर भार इस तरकीब से लाया गया है कि उसी पैर के स्नायुओं को छोड़ कर और सब स्नायुओं को विश्रांति मिलती है तथा उसी पैर के जांघ पर बहुत कम भार रहता है। इसलिये उस पैर के पिंडली के स्नायु मजबूत होजाते हैं।

चित्र नं० ३५

गरुड़ासन

यह एक सामान्य नियम देखा गया है कि जिस हड्डी पर भार अधिक आता है वह बढ़ जाती है। बैठने लगने के पहिले बच्चे के मेरुदंड के नीचे के मणि प्रमाण में छोटे होते हैं, परन्तु बैठने के कारण जब उन्हीं मणियों को शरीर का अधिक बोझ उठाना पड़ता है वे बढ़ जाते हैं। बड़े मनुष्यों में नीचे के मणि प्रमाण में बहुत बड़े होते हैं। इसी प्रकार मेरुदंड के ऊपरी भाग के मणियों पर भार कम होने से वे नीचे वालों की अपेक्षा छोटे रह जाते हैं। स्नायुओं के खिंचाव से भी उस भाग में रक्त प्रवाह अधिक हो जाने के कारण हड्डी बढ़ती है।

द्विभुजासन तथा कुक्कुटासन में सब शरीर का भार हाथ पर पड़ता है वैसे ही इस आसन में शरीर का सब भार एक एक पैर पर आता है और वहां की हड्डियों की वृद्धि करता है इन आसनों का प्रयोजन ही हाथ पैर की हड्डियां बढ़ाते हुए उनके स्नायु भी दृढ़ करने का है। इन आसनों में हाथ पैर पर वजन दिया जाता है तो गर्भासन में इन अवयवों को युक्तिपूर्वक ऐसा जमाया जाता है जिससे ये खिंचे रहें। इस प्रकार स्नायुओं की मजबूती के साथ ही साथ हाथ पैर की हड्डियां बढ़ाकर ये आसन मनुष्य की उंचाई भी बढ़ा सकते हैं।

मत्स्येन्द्रासन

वामोरु मूलार्पित दक्षपादं, जानों बहिर्वेष्टित वामपादम्।
प्रगृह्यतिष्ठे त्परिवर्तितांग: श्रीमत्स्यनाथोदित मासनं स्यात ॥
हठ० प्र० १-२६

विधिः—प्रथम पैर लम्बे पसार कर वैठो। अब दाहिने पैर को मोड़कर उसके पंजे को दोनों हाथ से बाई जांव के जोड़ के ऊपर जमादो, एड़ी नाभि के पास रहेगी। अब दाहिना पांव उठा कर उसको बाई जांघ के पीछे खड़ा करो इस अवस्था में शरीर का सारा भार दाहिने चूतड़ पर आजायगा। यदि आरम्भिक अभ्यास में इस प्रकार शरीर को सम्हाल न सको तो दाहिने चूतड़ के नीचे कपड़े का छोटा सा लपेटा धर दो। पीछे बाएं हाथ से घोंटू दाहिनी ओर दबाते हुए दाहिना हाथ उठा कर उसके पीछे डाल दो। बांह से उसे दबाते हुए दाहिने हाथ को लंबा कर बाएं पैर का अंगूठा पकड़ लो। इस प्रकार अंगूठा पकड़ने से घोंटू बांह से छूट नहीं सकेगा। फिर बायां हाथ पीठ के पीछे डाल कर उससे दाहिने पैर का अंगूठा पकड़ लो। सिर बाई ओर घुमा कर बिल्कुल दोनों कंधों के सीध में लाओ, दृष्टि सामने या नासिकाग्र रखो। (देखो चित्र नं० ३६) इस आसन में शरीर घुमाने के समय छाती नीचे न दबनी चाहिये। मेरुदंड सीधा रखते हुए उसको दाहिनी और बाई ओर मोड़ना इस आसन का प्रयोजन है।

चित्र नं० २६

मत्स्येन्द्रासन

यह आसन पैर बदल के द्वारा करना आवश्यक है जिससे मेरुदंड दाहिनी और बाईं ओर मुड़ जाय। दोनों वार सामान्यतः दो दो मिनट देना शारीरिक लाभ के लिये पर्याप्त है। जो लोग इसको न कर सकेंगे वे अर्ध मत्स्येन्द्रासन (देखो पृष्ठ नं० ५४) करें इस आसन से भी अल्प प्रमाण में मत्स्येन्द्रासन के प्रायः सभी लाभ होंगे।

मत्स्येन्द्रासन से लाभ

इस आसन में मेरुदंड को दोनों ओर बहुत पूरा घुमाव मिलता है नीचे से लेकर ऊपर तक के सभी मणि इस आसन में घूमते हैं और यदि उनमें से कोई जकड़ गये हों तो वे खुल जाते हैं। इस आसन में एक और भी युक्ति लगाई गई है। जांघ पर जो पैर चढ़ाया जाता है वह घोंटू खड़ा कर देने पर पेट की प्रधान रक्त वाहिनी को दवा देता है और पेट में रक्त प्रवाह बहुत अंश में स्थगित कर देता है। यह रक्त प्रवाह सब पीठ की तरफ चला जाता है और पीठ के सब स्नायु, विशेषरूप से, नीचे के जो खूब खिंचे रहते हैं उनको तथा वहां रही हुई प्राण नाड़ियों को पुष्ट करता है। यह आसन पाचक रस ग्रंथियों को भी पुष्ट करता है और भूख बढ़ाते हुए पेट के रोगों को दूर करता है। इसके अतिरिक्त इस आसन से प्राण की शक्ति बढ़ने के कारण यह अनंत रोगों को निर्मूल करता है *।

आध्यात्मिक दृष्टि से इस आसन को ऊपर दिये हुए प्रकार से यानी दाहिना पैर बाएं जांघ पर रख कर ही करना चाहिये;

पीछे थोड़ी देर के लिये दूसरी तरफ से करना भी अच्छा है। इस के अभ्यास से कुण्डलिनी जाग्रत होती है और चित्त में शान्ति भी आ जाती है।

---

* मत्स्येन्द्रपीठं जठरप्रदीप्तिं प्रचण्डरुग्मण्डलखण्डनास्त्रम्।
अभ्यासतः कुण्डलिनीप्रबोधं चन्द्रस्थिरत्वं च ददाति पुंसाम्॥

ह० प्र० १-२७

चित्र नं० ३७
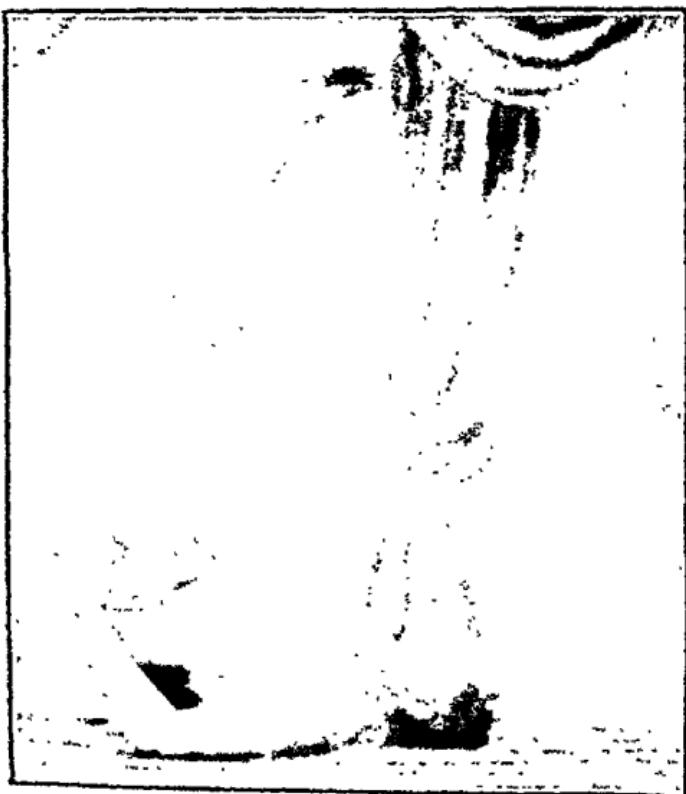
विपरीत करणी

विपरीत करणी

विधिः—प्रथम पैर लम्बे करके लेट जाओ। पैर मिलाकर रखो और हाथ शरीर के पास रखो। फिर पैर धीरे धीरे जमीन से उठाते जाओ। पैर विल्कुल सीधे खड़े होजांय तब चूतड़ को दोनों हाथों का सहारा देकर ऊपर उठाओ पैर वैसे सीधे ही ऊपर चले जांय। बांह जमीन में ही लगे रहते हुए हाथ सीधे करके जितना चूतड़ ऊपर उठ जाय उतना ही उठाना चाहिये। इस प्रकार पैर तथा चूतड़ का वजन हाथ पर आजाता है, गर्दन से चूतड़ की तरफ खिंचाव रहता है और पीठ थोड़ी मुड़ी हुई रहती है। अन्त में जिह्वा बंध लगाने से आसन पूरा होजाता है (देखो चित्र नं० ३७)*। तालु को जीभ से दावे रहना इसको जिह्वा बंध कहते हैं।

सामान्यतः यह आसन ६ मिनिट से लेकर २४ मिनिट तक किया जाता है।

विपरीत करणी से लाभ

विपरीत करणी में गर्दन के तथा पीठ के स्नायु नीचे की तरफ खिंचते हैं, इसलिये ये स्नायु मजबूत हो जाते हैं इसमें अल्पांश में शीर्षासन तथा सर्वांगासन दोनों आसनों के फायदे रहते हैं।

---

* विपरीत करणी का यह प्रकार भी कहीं कहीं मिलता है। विपरीत करणी का मुख्य उद्देश्य चन्द्र सूर्य को उलटना है; वह शीर्षासन ही में पूर्णरूप से सिद्ध होता है इसलिये उसीको विपरीत करणी कहना हमको अधिक प्रशस्त माल्लम होता है।

शवासन

उत्तान शववद् भूमौ शयानन्तु शवासनम् ।
शवासनं श्रम हरं चित्त विश्रान्तिकारकम् ॥
घे० सं० २-१७

विधि:—हाथ पैर लम्बे पसार कर आराम से पीठ के बल लेट जाओ । पैर मिले रहें तथा हाथ शरीर के पास रहें, दृष्टि सामने रहे। अब मनको दो मिनिट एकाग्र करो और शरीरको बिल्कुल ढीला छोड़ दो;उसका प्रत्येक स्नायु प्रयत्नपूर्वक ढीला छोड़ दो।हम कैसे भी निचेष्ट क्यों न पड़े रहें, हमारे कुछ स्नायुओं पर थोड़ा बहुत खिंचाव रहताही है,स्पष्ट संकल्प करके इस खिंचाव को भी रोक दो । प्रथम छाती का भाग लो; उसके आगे के, पीछे के, भीतर के सभी स्नायु ढीले छोड़ो । ऐसी भावना करो कि वे अब है ही नहीं । छाती के पीछे पेट के स्नायुओं को ढीले करो, पश्चात् हाथ पैर को अन्त में मस्तिष्क (दिमाग) को भी निश्चेष्ट करो । शरीर के स्नायुओं के खिंचाव के कारण ही मनुष्य का मन शरीर में रहता है, यह खिंचाव प्रयत्नपूर्वक निवारण करने से मन बहुत शान्त होगा और श्वासोच्छ्वास समान होने लगेंगे ।

इस समय मन की शान्ति इतनी बढ़ जाती है कि नींद आने लगती है परन्तु नींद को रोकना चाहिये और मन को समान चलने वाले श्वास प्रश्वास में लगा देना चाहिये। वायु का बाहर निकलना

और भीतर प्रवेश करना इस क्रिया को मन सावधानतापूर्वक निरीक्षण किया करे, वायु भीतर प्रवेश करता है तो उसके साथ मन को जोड़ कर भीतर तक उसके स्पर्श का अनुभव करना चाहिये। यह सब क्रिया करते समय सावधानी रखनी चाहिये कि कहीं मन बीच में गायब न हो जाय। इच्छा दृढ़ संकल्प शक्ति द्वारा ही यह सब काम करने का है नींद न आने के लिये और समय जैसे शारीरिक प्रयत्न किये जाते हैं वैसे न किये जांय।

इस अभ्यास को दो मिनिट से प्रारंभ करके १५ मिनिट तक कर सकते हैं।

दस पंद्रह दिन ही में श्वासोच्छ्वास बिल्कुल नियमित हो जांयगे और बड़ा आनन्द और स्फूर्ति मालूम होगी। पंद्रह दिन के पश्चात् श्वास प्रश्वास कुछ गहरे लेने का प्रयत्न करो परन्तु ध्यान इस बात का रहे कि जितना काल श्वास के लिये दिया जाय उतना ही काल प्रश्वास को देना चाहिये। श्वास प्रश्वास समान रखने में आरंभ में कुछ कठिनता मालूम होगी परन्तु आगे वह आप ही दूर हो जायगी। यह अभ्यास बीस मिनिट तक करना चाहिये।

पश्चात् कुछ काल तक एकाग्र रह कर शरीर के प्रत्येक अवयव पर मन को ले जाना चाहिये और वहां के रक्त प्रवाह का अनुभव करना चाहिये।

यह आसन और आसनोंके कर लेनेके पश्चात् करना चाहिये।

शवासन से लाभ

शवासन में समस्त शरीर को बहुत विश्रान्ति मिलती है, शरीर के सभी स्नायु ढीले होने से रक्त का तथा प्राण का संचार बहुत अच्छी तरह से होने लगता है। इसलिये सब शरीर बिल्कुल ताजा हो जाता है ।

शवासन को अत्यन्त सुलभ समझ कर कोई उसकी अवहेलना करे तथा विश्रांति का मूल्य भी कोई कम न समझे। विधि युक्त व्यायाम जितना महत्व का है उतनी ही विधि युक्त विश्रांति भी महत्व की है। विधि युक्त व्यायाम निसर्ग को शरीरके विकास में प्रेरित करता है तो विधि युक्त विश्रांति में निसर्ग उसको सुव्यवस्थित करती है। इस आसन में केवल शरीर की अवस्था का अनुकरण ही नहीं करना चाहिये बल्कि उसमें दी हुई सब बातें बराबर करनी चाहियें। आसन के विधि के अन्त में जो क्रियायें दी हैं उनके करने से आसन का फल सहस्र गुणा अधिक होगा। इतना ही नहीं, ये क्रियायें अध्यात्मिक उन्नतिमें भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होंगी। यहापर दिये हुए संपूर्ण विधि से करने पर इस आसन में एकाग्रता बहुत ही सुलभता से होती है।

चित्र नं० ३८

उड्डियान बंध
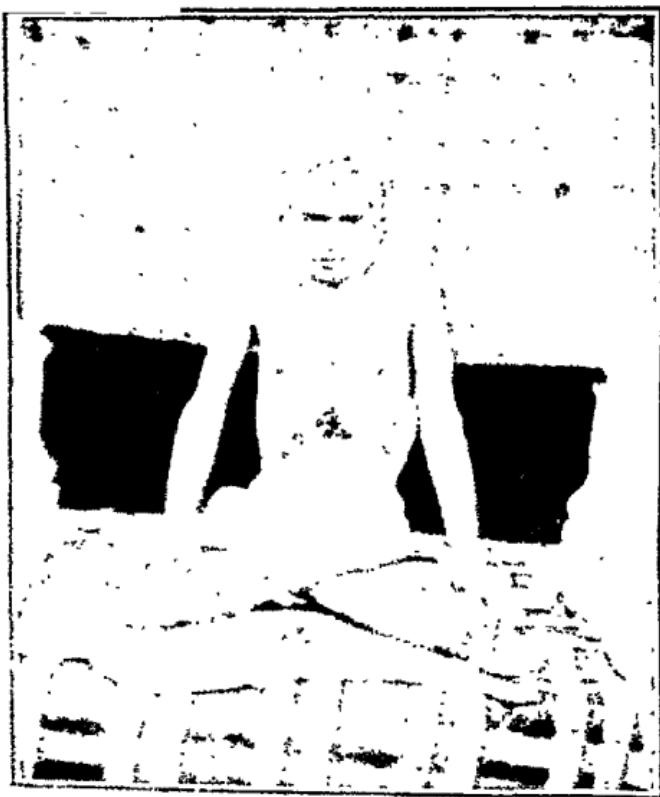
उड्डियान

उड्डियान कोई आसन नहीं है । प्राणायाम के साथ इसको बंध कहते हैं और स्वतंत्रता से करने पर इसको मुद्रा कहते हैं । हमने इन दोनों पारिभाषिक शब्दों को छोड कर इसको केवल उड्डियान कहा है । आसन के पुस्तक में इस क्रिया का स्थान नहीं है, परन्तु यह क्रिया इतनी आसान और उपयोगी प्रतीत होती है कि आसन के पुस्तक में भी इसको स्थान देने के लोभ को हम नहीं छोड़ सकते ।

उदरे पश्चिमंतानं नाभेरूर्ध्वं च कारयेत् ।
उड्डीयानो ह्यसौ बंधः मृत्युमातंग केसरी ॥

विधिः—प्रथम पद्मासन लगाकर बैठ जाओ, दोनों हाथ दोनों घोंटुओं पर रखो। हाथ कोहनियों से मोड़ कर कोहनियों तक हाथ सीधे खड़े रखो। पीठ को कुछ बाहरी बांक देते हुए सिर को भी नीचे झुकाओ जिससे कि पेट अच्छी तरह से देखा जा सके। अब पीठ के तथा पेट के स्नायुओं को संकुचित करते हुए श्वास पूर्णरूप से बाहर छोड़ दो । फिर पीठ के स्नायु कड़े करते हुए और हाथ पर भार डालते हुए नाभि के नीचे से पेट को ऊपर खींचो। पेट बिल्कुल पीठ में मिल जाय और ऊपर पसलियों के नीचे घुसजाय।

खड़े होकर भी उड्डियान किया जाता है। पैर फुट डेढ़ फुट के फासले पर घोंटू पर हाथ रख कर खड़े होजाओ। और ऊपर कहा है उसी प्रकार उड्डियान को करे।

इन दोनों में से किसी एक प्रकार से उड्डियान का अभ्यास ठीक हो जाने पर इसको शीर्षासन के द्वितीय अवस्था में (देखो चित्र नं० २) किया जाता है। परन्तु यहां उड्डियान करने के लिये घोंटू अधिक नीचे रखने चाहिये। उड्डियान सर्वांगासन, सिद्धासन, पश्चिमोत्तान आदि आसनों में भी किया जाता है।

उड्डियान एक ही समय, बीच में थोड़ी विश्रांति लेते हुए, तीन वार से लेकर सात वार करना चाहिये और प्रत्येक वार करीब दस सेकंड करना चाहिये। एक बात का ध्यान रखना चाहिये कि पेट इतने अधिक काल तक खिंचा न रखना चाहिये जिसमें कि एक साथ उसको छोड़ देना पड़े।

उड्डियान से लाभ

जितनी व्याधि हैं उनमें से अधिकांश व्याधि केवल आंतें साफ न रहने ही से होती हैं। यदि किसी प्रकार से आंतें साफ रखने की कोई युक्ति निकाली जाय तो अधिकांश रोगों से मुक्ति मिलेगी। उड्डियान ठीक यही करता है. उड्डियान करने में बड़ी आंत का पहिला भाग (Cecum) तथा अंतिम भाग (Decending colon) बिल्कुल खाली होजाते हैं तथा संपूर्ण आंत पर कुछ न कुछ असर करता है। पाचक रस ग्रन्थियों को तथा दिल फैफड़े आदि को नीचे से दबा कर उत्तेजित करता है जिस से वे अधिक बलवान होते हैं। इस प्रकार यह सीधी साधी क्रिया बड़े महत्व के अवयवों को सुदृढ़ करती है इसीलिये हठयोग प्रदीपिका में कहा है कि उड्डियान बंध करने वाला मृत्यु को

जीतता है यह अतिशयोक्ति अवश्य है परन्तु इसके सर्व प्रकार के लाभ देखते हुए यह अतिशयोक्ति अनुचित नहीं प्रतीत होती।

बद्धकोष्ठता दूर करने में यह अद्वितीय है और शीर्षासन पश्चिमोत्तानासन आदि का योग देने से यह अधिक फलदायी होता है। जिनकी तिल्ली या जिगर बढ़ा हुआ हो वे भी इसका सावधानता पूर्वक अभ्यास करें तो वे नीरोग होंगे। इन रोगों के अलावा अन्य भी कई रोग इससे दूर होते हैं तथा भविष्यत् में होने वाले रोगों का प्रतिकार होता है। इसलिये सब किसी को इसका सेवन करना बड़ा लाभ कारी है।

रोग निवारण के अतिरिक्त उड्डियान से एक और भी लाभ है उड्डियान में मेरुदंड को ऊर्ध्व तनाव पड़ता है। इस तनाव से मेरुदंड अधिक लंबा होता है और इस कारण मेरुदंड के मणि खुल जाते हैं और मेरुदंड की लंबाई भी बढ़ जाती है।

आसनों का दैनिक अभ्यास क्रम।

आसन के ग्रन्थों में एक एक आसन के विविध गुण लिखे हुए होते हैं तथा एकही गुण के अनेक आसन लिखे हुए होते हैं, इसलिये सामान्य मनुष्य यह ठीक निश्चय नहीं कर सकता कि उसके लिये कौन कौन से आसन करना हितकर है। इस असुविधा को दूर करने के लिये यहां पर आसनों का एक सामान्य अभ्यास क्रम दिया जाता है। इसको यदि संध्या समय नियम से किया जाय तो शरीर स्वस्थ, सुन्दर और मजबूत हो जायगा तथा बुद्धि भी शुद्ध और तीव्र हो जायगी।

१ शीर्षासन—आधे मिनट से बारह मिनट तक, प्रति सप्ताह आधा मिनट बढ़ाया जाय।

२ सर्वांगासन—आधे मिनिट से छः मिनिट तक, प्रति सप्ताह आधा मिनिट बढ़या जाय।

३ मत्स्यासन—१५ सैकंड से तीन मिनिट तक, प्रति सप्ताह १२ सैकंड बढ़ाया जाय।

४ हलासन—१ मिनिट से चार मिनिट तक, प्रति सप्ताह एक मिनिट बढ़ाया जाय।

५ भुजंगासन
६ शलभासन
७ धनुरासन

} ये आसन तीन वार से लेकर सात वार करने चाहिये और प्रति वार हर एक आसन दस सैकंड रखना चाहिये। प्रति सप्ताह एक वार बढ़ाना चाहिये।

८ अर्ध मत्स्येंद्रासन—१५ सैकंड से एक मिनिट तक, प्रति सप्ताह् १५ सैकंड वढ़ाया जाय ।

[इसको आसन दाहिने और वाएं दोनों तरफ से करना चाहिये]

९ पश्चिमोत्तानासन—१५ सैंकड से एक मिनिट तक, प्रति सप्ताह् १५ सैंकड वढ़ाया जाय ।

१० मयूरासन—१० सैंकंड से दो मिनिट तक, प्रति सप्ताह् १५ सेकंड वढ़ाया जाय ।

११ योगमुद्रा—* १ मिनिट से तीन मिनिट तक, प्रति सप्ताह् एक मिनिट वढ़ाया जाय ।

१२ शवासन—२ मिनिट से दस मिनिट तक, प्रति सप्ताह् २ मिनिट वढ़ाया जाय ।

ऊपर दिये हुए आसनों को दिये हुए क्रम ही से करना चाहिये । यदि उनमें से कोई आसन किसी से न बन सके तो वह शेष आसनों को ही करे इसमें कोई हानि न होगी । सभी आसन एक साथ ही करने की आवश्यकता नहीं है, बीच में काफी विश्रान्ति ली जा सकती है । आसनों की काल मात्रा का निर्णय सामान्यता से किया गया है यदि इससे किसी को थकावट मालूम हो तो वह उतने काल तक न करे । आवश्यकतानु-

---

* पद्मासन करके हाथ पीठ पर डालते हुए एक हाथ का पहुंचा दूसरे हाथ से पकड़ो । फिर कमर से झुककर सिर जमीन में लगाओ । इसको योगमुद्रा कहते हैं ।

सार अल्प काल ही करे। किसी हालत में भी आसन करने के पश्चात् थकावट नहीं मालूम होनी चाहिये; आसन करने के पश्चात् शरीर और मन में नया जोश आजाना चाहिये। आसन करने के पहिले या पूर्व तुरन्त नहीं खाना चाहिये। सामान्य भोजन करने पर साढ़े चार घंटे तक आसन नहीं करने चाहिये; दूध पीकर आध घंटे के बाद आसन किये जा सकते हैं।

यह अभ्यास क्रम सामान्य स्वास्थ्य वालों के लिये ही है "जिनका स्वास्थ्य अधिक खराब हो वे किसी जानकार की सलाह ही से काम लें"।

ब्रह्मचर्य

आर्यावर्त के समान धार्मिक देश में बच्चे भी इस बात को जानते हैं कि शरीर का राजा वीर्य है। हमारे धर्म में ब्रह्मचर्य की महत्ता विशेष है। प्राचीन ग्रंथों में इसकी महिमा उच्च स्वर से गाई गई है। परन्तु आजकल जिधर देखो उधर ब्रह्मचर्य के अभावकी शिकायत सुनने में आती है। सामाजिक, धार्मिक या राजनैतिक सभी क्षेत्रके प्रधान पुरुष इस देश के अवनति का मुख्य कारण सामान्य जनता में, और विशेष रूप से शिक्षित समाज में, ब्रह्मचर्य का अभाव ही बताते हैं। इस प्रश्न को हल करना इस निबंध को क्षेत्रके बाहर है, परंतु इन सब बातों का निष्कर्ष यही निकलता है कि सब विद्वान् और विचारशील मनुष्य ब्रह्मचर्य को जीवन का एक अत्यन्त महत्व का अंग मानते हैं।

ब्रह्मचर्य की संपूर्ण मीमांसा करने का यह स्थान नहीं है, हम यहां पर केवल इतना ही विचार करेंगे कि किसी कारण से जिनका ब्रह्मचर्य शिथिल हो उनको आसन कहां तक लाभ पहुँचा सकता है। ये लोग दो भागों में बंट सकते हैं; एक वे जिनको इससे शारीरिक नुकसान न पहुंचा हो और दूसरे वे जिनको शारीरिक नुकसान हुआ हो।

प्रथम हम उनका विचार करते हैं, जिनके ब्रह्मचर्यकी शिथि-लता का शरीर पर कुछ भी बुरा असर नहीं पड़ा है और उनकी

शिकायत बहुधा स्वप्नदोष की होती है। इस वर्ग के अधिकांश लोग ब्रह्मचारी ही होते हैं उनको केवल अज्ञान के कारण एक वहम पैदा हो जाता है और यदि इस माने हुए दोष को दूर करने के लिये कोई बाजारू उपाय किया जाय तो ये लोग व्यर्थ ही अपने पर संकट परम्परा बुला लाते हैं। निरर्थक शक्ति वर्धक या ऐसे ही प्रकार की दवा या अन्य उपाय किये जाते हैं परन्तु अधिकतर ये निरुपयोगी सिद्ध होते हैं और मनुष्य चिन्ता के चिता में जलता रहता है और बहुधा इस चिंता से शरीर को कमजोर बना डालता हैं।

इनकी चिन्ता का मूल हेतु ब्रह्मचर्य सम्बंधी अज्ञान है। सामान्यतया स्वप्नदोष को उचित से अधिक महत्व दिया जाता है। स्वप्नदोष को अत्यन्त ही बुरा माना जाता है परन्तु वह हमेशा इतना बुरा नहीं होता। स्वप्नदोष का वास्तविक क्या हेतु है उसको जान लेनेसे हमारा आशय समझमें आ जायगा। इसलिए इस विषय की थोड़ी कल्पना देने का हम नीचे प्रयत्न करते हैं।

मनुष्य के शरीर में वीर्य हमेशा एक जगह बना करता हैं और दूसरी जगह वह संगृहीत होता है। इस के व्यय के दो मार्ग होते हैं; एक तो बाहर निकलना और दूसरा वहां आने वाली रक्त वाहिनियों द्वारा रक्त में मिल जाना। यह वीर्य रक्त में जितने प्रमाण में मिलता है, उतने ही प्रमाण में आदमी वीर्यवान होता है, यदि इसका रक्त में मिलना बंद हो जाय तो उस प्राणीमें वीर्य उत्साह पुरुषत्व नहीं रहता। यहां तक कि यदि अल्प वयमें इसका

बनना रोक दिया जाय तो उस प्राणीमें पुरुषत्व के चिह्न तक नहीं उत्पन्न होते। व्यवहारमें इसका उदाहरण प्रसिद्ध है। बैल में और सांढ में यही भेद होता है। पुरुषत्व का विकास होने के पूर्व ही बैल बनाये जाते हैं। रक्त में वीर्य न आने से बैल निर्वीर्य रहते हैं और सांढ हमेशा वीर्यवान् रहता है। बैल की आकृति भी गाय से मिलती रहती है। इस उदाहरण से प्रतीत होगा कि वीर्य का दूसरा उपयोग कितने महत्व का है। यह निसर्ग का नियम है कि शरीर में जितना व्यय हो सकता है इससे बहुत अधिक प्रमाणमें यह बनता रहता है, जिससे कोई भी जाति पृथ्वी पर से नष्ट न हो जाय परन्तु बढ़ती रहे।

वस्तु स्थिति ऐसी होने से अधिक बना हुआ यह द्रव्य बाहर निकलना ही चाहता है, फिर उसमें और भी बातें सहाय रूप हो जाती हैं। ऊपर जो हमने वीर्य का खजाना बताया उसका स्थान मूत्राशय और मलाशय के बीच में है। रात्रि में ये दोनों आशय खाली करके सोया जाय तो भी ये रात में पुनः भर जाते हैं और इनका दबाव उसको बाहर निकलनेमें सहायता देता है। बद्ध कोष्ठता में मलाशय में मल अधिक काल रुकता है और उस समय उस मल का जहर (Toxins) रक्त में प्रविष्ट करता है। इसके द्वारा वहां की प्राण नाड़ियां (Nerves) उत्तेजित हो जाती हैं और इस हालत में स्वप्न दोष हुआ करता है। इसलिये सामान्यता से होने वाले स्वप्नदोष से किसी को भय नहीं करना चाहिये। सामान्यतया यहां कहा जा सकता है कि महीने में एक

दो वार यदि यह दोष होजाय और उससे शरीर में कमजोरी मालूम न हो, तो उस तरफ ध्यान नहीं देना चाहिये। शरीर को शुद्ध करके भगवत् स्मरण पूर्वक अपने काम में लग जाना चाहिये। वारवार इन वातों की चिन्ता करने से भी उसके परिणाम रूप से वीर्य आवश्यकता से अधिक वनने लगता है और वारवार वाहर निकलता है। वीर्य के आवश्यकता से अधिक वनने से भी शरीर की अन्य ग्रंथियां दुर्वल होजाती है इस लिये इन वातों से चित्त को हटा कर शुभ विचारों में लगा देना चाहिये।

ऊपर की वात व्यवहारिक दृष्टि से ठीक होते हुए भी आदर्श नहीं है। आदर्श तो यही है कि जितना वीर्य शरीर में वने उतना सव शरीर ही में व्यय होजाय। इस आदर्श के पालनकर्त्ता का ही नाम 'ऊर्ध्वरेता' है। ऐसे ऊर्ध्वरेता केवल योगी महात्मा ही होते हैं। योग की क्रियाओं द्वारा ये लोग वीर्य को उपयोग में लाने की शरीर की ताकत वढ़ालेते हैं जिसके परिणाम स्वरूप वे दीर्घजीवी उत्साही और साहसी होते हैं।

संसार के सर्व साधारण मनुष्य यदि ऊर्ध्व रेता नहीं वन सके तो वे अपने शरीर के उपयोग में आने वाले वीर्य के प्रमाण को वढ़ा सकते हैं और यही काम आसनों से होता है। सर्वांगासन करने से वद्ध कोष्ठता स्वाभाविक तया दूर हो जाती है। सर्वांगासन थायराइड (Thyroid) की शक्ति वढ़ाता है यह हम पहिले वता चुके हैं। थायराइड मजवूत होने ही से वद्ध कोष्ठता दूर होती है वैसे ही थायराइड का विशेष कार्य यह है कि

यह वीर्य रक्त की वीर्य ग्रहण करने की शक्ति को बढ़ाती है। शीर्षासन में भी यही लाभ होता है इसलिये यह करना उपयोगी है। उड्डियान भी इस के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यदि इन आसनों को नियम पूर्वक किया जाय तो ब्रह्मचर्य सम्बन्धी सभी शिकायतें दूर हो जावेंगी।

आरम्भ में मलाशय शुद्ध करने के लिये हलका रेचक लेना अच्छा है। सेर डेढ़ सेर पानी में थोड़ा नमक मिलाकर पीना अच्छा रहेगा। इसके अलावा ऐसे मनुष्य यह भी ख्याल रखा करें कि सोते समय उनका पेट हलका रहे।

अब हम दूसरे वर्ग का विचार करेंगे। इसमें ऐसे मनुष्य आते हैं कि जिनको इस संबंध की कुछ बुरी आदतें पड़ गई हों। इन सब का वर्णन हम यहां नहीं देना चाहते, परन्तु इतना कह देते हैं कि जितनी ये आदतें परतंत्र हो उतना उनका उपाय सहज है और हानि की मात्रा भी न्यून है। यदि ये स्वतन्त्र हों, तो बहुत ही हानिकारक होती हैं और मनुष्य के शरीर और बुद्धि दोनों को अत्यंत ही कमजोर कर देती है; इनकी बुद्धि इतनी निकम्मी हो जाती है कि वे अपना कोई निश्चय ही नहीं रख सकते।

प्रथम प्रकार के मनुष्य सतसंग में और सद्विचारों में अपना अधिक काल वितावें। उत्तेजक खाद्य पदार्थों का तथा नाटक बायस्कोप आदि का त्याग करें। ठंढे पानी से स्नान, बने तो दो बार किया करे, और पानी में बैठ कर तौलिये से पंद्रह बीस

मिनट तक नीचे के पेट को हलकी मालिश किया करें। यदि पानी में बैठने का सुभीता न हो तो बार बार तौलिया भिगोकर उसी से काम लेना चाहिये इस प्रकार की क्रिया भी उनको सहायता देगी। फिर नित्य नियम से सर्वांगासन मत्स्यासन शीर्षासन और उड्डियान किया करें अन्त में सिद्धासन या पद्मासन लगाकर बीस मिनट से लेकर एक घंटे तक शुभ संकल्प या ध्यान भजन किया करे।

दूसरे प्रकार की बुरी आदत वालों को इस प्रकार का कोई उपाय बताना कठिन है। वे इतना ही करें कि अपने को किसी योग्य सज्जन के सम्पूर्ण हवाले करदें जो इन को सुधार करना जानता हो और वैसा करने का भार उठा ले अथवा ऐसे पुरुष के अभाव में जब जब इन के मन में अच्छे संस्कार उदय हों तब तब उनको ग्रहण करके सत्संग और सत्संकल्पों द्वारा इनको मजबूत करने का प्रयत्न किया करे।

अन्त में दो शब्द ब्रह्मचर्य के प्रचारकों के लिये लिखना आवश्यक है। उनको चाहिये कि इन निर्बल प्राणियों को वे रोगी समझें अपराधी न समझें और इन से हमेशा हमदर्दी रखें जिससे इनमें श्रद्धा उत्पन्न हो। दूसरी बात यह है कि प्रचार कार्य में वे आदर्श और व्यावहारिकता को दोनों का स्पष्ट निर्देश किया करें। हम आज कल बहुधा यही देखते हैं कि ब्रह्मचर्य के व्यवहारिक पहलू को छिपाया जाता है जिससे कि बहुत से मनुष्य व्यर्थ ही मानसिक चिन्ता के और तज्जनित कष्ट परंपरा के भक्ष्य बन जाते हैं।

आसनों का तत्त्व

आदर्श जीवन के लिये आदर्श शरीर की बड़ी भारी आवश्यकता है। इसीलिये समय २ पर अपने२ आदर्श के अनुसार लोगों ने शरीर को सुसंगठित करने के लिये नाना प्रकार के अभ्यास क्रम प्रचलित किये हैं। इसी प्रकार आध्यात्मिक उन्नति का आदर्श आगे रखते हुए शरीर को उस मार्ग के उपयुक्त बनाने के लिये भी प्राचीन ऋषियों ने एक बृहत् अभ्यास क्रम तैयार किया है जो आज कल सामान्यतः 'योग' और विशेषतया 'हठयोग' * के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस अभ्यास क्रम का तीसरा अंग आसन है आसन के पूर्व के दो अंग यम और नियम हैं। यम नियम आसनों के पूर्व होने से आसनों का तत्त्व समझने के लिये उनका भी जानना आवश्यक है।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना) ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक पदार्थों का संग्रह न करना) ये पांच यम हैं। इनका पालन साधकों को आजन्म करना पड़ता है। प्रारंभ में इनका पालन पूर्णरूप से कोई कर नहीं सकता, इस लिये आरंभ में इनको पालन करने की हार्दिक इच्छा और यथा संभव प्रयत्न हो इतना ही पर्याप्त है।

---

* बहुत से आदमी हठयोग का संबंध केवल शरीर से ही है ऐसा समझते हैं वे भूल करते हैं। हठयोग एक स्वतंत्र मोक्षशास्त्र है।

शौच (सफाई), संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान ये पांच नियम हैं। आवश्यकतानुसार इनका सेवन करना पड़ता है। साधक की आध्यात्मिक उन्नति के लिये आवश्यक मानसिक स्वास्थ्य को उत्पन्न करके उनको स्थिर रखने के लिये इनका उपयोग किया जाता है।

इन दो अंगों के पालन से साधना के लिये आवश्यक अनुकूल परिस्थिति तथा मानसिक समता प्राप्त होती है तब साधक शरीर के तथा प्राण के विशेष विकास के प्रयत्न में लगता है। इस प्रयत्न का आरंभ आसनों से होता है। शरीर की तरफ से आध्यात्मिक प्रगति में रुकावटें खड़ी न हों यही इसका प्रधान उद्देश होता है। शरीर स्वस्थ नहीं नहीं होता तो साधारण काम में भी चित्त नहीं लगता। सिर में जरासा दर्द होने पर भी पढ़ना तक नहीं बनता तो अधिक सूक्ष्म मानसिक प्रवृत्तियां बनें ही कहां से? इसलिये योगी अपने शरीर को नीरोग बनाना चाहता है। केवल वर्तमान नीरोग अवस्था ही नहीं बाहर से प्राप्त होने वाले रोगों का प्रतिकार करने की भी काफी शक्ति रखने का वह यत्न करता है। प्राचीन योगी लोग इस प्रयत्न में अत्यंत सफल हुए हैं। उनका अभ्यास क्रम आज के अर्वाचीन से अर्वाचीन वैज्ञानिक आविष्कारों की दृष्टि से भी अत्यंत निर्दोष और परिपूर्ण है। आज हम यहां पर उनके अभ्यास क्रम के तृतीय अंग का विचार करेंगे।

व्यावहारिक जीवन के लिये जैसे शरीर की आवश्यकता होती है वैसा शरीर अध्यात्मिक जीवन के लिये उपयोगी नहीं होता। व्यावहारिक जीवन में स्नायुओं का महत्व अधिक होता है। शरीर रक्षा की दृष्टि से तथा व्यवसाय की दृष्टि से भी सुदृढ स्नायु अत्यंत उपयोगी हैं इसलिये शरीर के अन्य धातुओं का या अवयवों का विशेष विकाश भी स्नायुओं के व्यायाम द्वारा ही साधन किया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि जितने प्रमाण में स्नायु का विकाश होता है उससे बहुतांश न्यून प्रमाण में अन्य अधिक महत्व के अवयवों का विकाश होता है। योगी का लक्ष्य केवल आध्यात्मिक होने से उसके लिये शारीरिक शक्ति का इतना महत्व नहीं होता; उसको सूक्ष्म कार्य करना है इसलिये योगी स्नायुओं के विकास में ध्यान नहीं देता उसके लिये स्नायुओं का विकास एक गौण प्रश्न है। इसीलिये अधिक परिश्रम के व्यायाम को उन्होंने अपने अभ्यास क्रम में स्थान नहीं दिया। स्नायुओं का अधिक उपयोग न करते हुए शरीर के स्वास्थ्य के लिये अत्यंत उपयोगी ऐसे सूक्ष्म अवयवों के स्वतंत्र विकाश करने की युक्तियां उन्होंने अन्वेषित की है। इन युक्तियों का प्रारम्भिक भाग आसन है।

प्राणी अन्न से जीते हैं अन्न का रक्त बनता है और यह रक्त ही प्राणियों के शरीर के भिन्न २ अवयवों का पोषण करता है। शरीर का रक्षण भी रक्त ही करता है परन्तु इन कामों में उसकी मदद के लिये शरीर में नाना रस ग्रन्थियां (Secretory glands)

होती हैं। इन ग्रंथियों की सहायता से ही रक्त शरीर का संवर्धन तथा रक्षण करता है वैसे ही इन ग्रंथियों का पोषण भी रक्त ही से होता है। सब से अतरतम प्राण नाड़ियों का कार्य होता है। बोझ उठाना इत्यादि बाह्य क्रिया अथवा अन्न पाचन रक्ताभिसरण आदि आंतर क्रिया सब प्राण ही के अधीन होता है। अर्थात् शरीर के लिये ये आंतर रस ग्रंथियों का महत्व बहुत है और प्राण नाड़ियों का महत्व इनसे भी अधिक है।

परिश्रम के व्यायाम में स्नायुओं का तेजी से संकोच और विकास किया जाता है इसलिये उसमें रक्ताभिसरण तथा श्वासोछ्वास* बढ़ जाते हैं। परिश्रम के केन्द्र की ओर अधिक रक्त जाता है और परिश्रम के केन्द्र में परिश्रम के कारण जिन द्रव्यों की हानि हुई है, मन की पूर्ति करते हुए उसको शुद्ध और ताजा बनाता है। आसनों में इस प्रकार से शरीर के अंगों को एक विशिष्ट व्यवस्था से अधिक काल तक रखा जाता है, स्नायुओं का बार २ संकोच विकास नहीं किया जाता। इस व्यवस्था में परिश्रम का केन्द्र ही महत्व का अवयव बनाया जाता है। परिश्रम की मात्रा अत्यन्त न्यून कर दी जाती है जिससे अधिक परिश्रम में व्यय होने वाले द्रव्यों की भी बचत होती है परिश्रम

---

* प्राणी श्वासोप्रश्वास द्वारा भी एक प्रकार का खुराक ग्रहण करता है हवा में से प्राणप्रद वायु (oxygen) ग्रहण करना यही श्वास क्रिया का उद्देश है। हवा में से ग्रहण किया हुआ प्राण रक्त में मिलता है और वह शरीर के धातुओं के पोषण में काम आता है।

की मात्रा न्यून होने से परिश्रम के केन्द्र में रक्तप्रवाह अधिक नहीं बढ़ता, इसलिये रक्त प्रवाह बढ़ाने के लिये और युक्ति काम में ली जाती है। गुरुत्वाकर्षण से लाभ उठाना ही यह युक्ति है। उदाहरणार्थ, सर्वांगासन में शरीर को उलटा कर उसका सब भार गर्दन पर लिया जाता है। गर्दन पर शरीर को सम्हालने में पेट के स्नायु काम में नहीं लिये जाते, हाथों को पीठ के पीछे खड़ा करके बहुत ही अल्प परिश्रम में शरीर उलटा खड़ा किया जाता है। पीठ के पीछे रखे हुए हाथ के दबाव से ठोड़ी छाती में दब जाती है। इस प्रकार गर्दन के आगे का और पीछे का हिस्सा परिश्रम का केन्द्र बन जाता है परिश्रम के कारण तथा गुरुत्वाकर्षण के कारण इस भाग में आसन काल में तथा पश्चात् भी बहुत देर तक रक्त का विशेष संचार होता है। गर्दन में आगे और पीछे दोनों जगह शरीर के बहुत महत्व के अवयव हैं। गर्दन के आगे के भाग में थायरोइड (Thyroid) होता है, यह ग्रंथि शरीर के संवर्धन तथा संरक्षण के साथ बहुत घनिष्ठ संबंध रखती है। गर्दन के पीछे के भाग में मुख्य प्राण नाड़ी का उद्गम स्थान होता है शरीर के हृदय आदि महत्व पूर्ण भागों को नियम में रखने वाली नाड़ियों का केन्द्र इसी स्थान पर होता है। इन भागों में रक्त प्रवाह अधिक आने से ये भाग अधिक पुष्ट होते हैं और उसके द्वारा शरीर पुष्ट और नीरोग बनता है।

परिश्रम के व्यायाम में स्पष्टतया दिखाई देता है कि जिस स्नायु से परिश्रम किया जाता है उसकी विशेष रूप से वृद्धि होती है

और उसके समीपवर्ती अंग भी न्यूनाधिक प्रमाण में बढ़ते हैं। इसी प्रकार आसनों में भी होता है। सर्वांगासन में परिश्रम के केन्द्र पर जितना असर पड़ता है उससे कुछ न्यून प्रमाण में उसके समीपवर्ती अवयवों पर भी असर पड़ता है। इस केन्द्र के समीप एक तरफ महत्व की ग्रंथियों सहित मस्तिष्क और दूसरी तरफ रक्त का खजाना रूप हृदय है। शरीर की सामान्य अवस्था में ये दोनों अवयव ऊपर रहते हैं। इस आसनमें ये नीचे होजाने से इनमें रक्त का प्रवाह बढ़ता है। इस आसनमें हृदय में अधिक रक्त आ जाता है जो हृदय को अधिक मजबूत बनाता है। सामान्यतः मस्तिष्क के लिये रक्त को गुरुत्वाकर्षण के विरुद्ध ऊपर चढ़ना पड़ता है इसलिये वहां पर रक्त लेजाने वाली रक्त वाहिनियां कुछ मोटी होती हैं। सर्वांगासन में ये रक्त वाहिनियां कुछ दब जाती हों तो दबी हुई भी वे नाड़ियां मस्तिष्क को, गुरुत्वाकर्षण के अनुकूलता के कारण अधिक रक्त पहुंचा सकती हैं।

मस्तिष्क शरीर का एक अत्यन्त महत्व का भाग है उसको सर्वांगासन में कुछ अधिक रक्त अवश्य पहुंचता है; परन्तु उसको और अधिक रक्त पहुंचाने के लिये शीर्षासन की योजना है। इस आसन में गुरुत्वाकर्षण का केन्द्र तथा परिश्रम का केन्द्र शिरोभाग में होता है।

परिश्रम के व्यायाम में केवल परिश्रम ही से काम लिया जाता है। योगियों ने परिश्रम का मान तो अल्प रखा है परंतु

विश्रांति के तत्त्व को वे भूले नहीं हैं। हम देखते हैं कि दिन भर काम करने वाला घन्टा भर विश्रांति लेता है तो पुनः ताजा हो जाता है। इस विश्रांति के तत्त्व का योगियों ने स्थान स्थान पर उपयोग किया है। शीर्षासन में शरीर के संपूर्ण अवयवों की स्थिति बदल जाती है। जिन आन्तर अवयवों को लेटने पर भी विश्रांति नहीं मिलती या कम मिलती है उनको इस आसन में संपूर्ण विश्रान्ति मिलती है और विश्रान्ति पाकर दूनी शक्ति से ये अवयव काम करने लगते हैं।

इसी प्रकार मयूरासन में परिश्रम का केन्द्र पेट और पीठ बनाया जाता है तथा सिद्धासन में परिश्रम का केन्द्र कन्द* होता है मयूरासन में नाभि के नीचे दबाव डाल कर वहां की रक्त-वाहिनी को दबाया जाता है जिससे रक्त नीचे न जाते हुए पाचक रस ग्रंथियों की ओर जाता है। जिससे शरीर की पाचन शक्ति बहुत बढ़ जाती है। इसी प्रकार सिद्धासनादि आसनों में जननेन्द्रियों की ओर रक्त का प्रवाह आकर्षित किया जाता है।

यह ग्रंथियों की बात हुई। प्राण नाड़ियों के संरक्षण और संवर्धन करने में भी इसी प्रकार की युक्तियां योगशास्त्र में मिलती हैं। प्राण के आदि स्थान (मस्तिष्क) में रक्तप्रवाह का विशेष संचार करने के लिये शीर्षासन है; प्राण नाड़ियों के उद्गम स्थान में विशेष रक्त संचार करने के लिये सर्वांगासन है इसी प्रकार

---

* कन्द के वर्णन के लिये देखो पृष्ठ ७४।

मुख्य प्राण नाड़ी के प्रत्येक भाग में रक्त का प्रचुर प्रवाह मिल सके इस प्रकार के आसन नियोजित किये गये हैं। प्राण नाड़ियों का स्वास्थ्य विशेष रूप से मेरुदंड के स्वास्थ्य पर निर्भर होता है। इसलिये मेरुदंड को सुन्दर लचीली हालत में रखने के लिये भी उपाय सोचे गये हैं।

भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, हलासन तथा मत्स्येन्द्रासन इस विषय में महत्व के आसन हैं, इन आसनों में भिन्न भिन्न प्रकार से मेरु दंड मुड़ा करता है और उड्डियान में वह ऊपर खिंचता है, जिसके परिणाम रूप वह लचीला हो जाता है इन आसनों से एक और भी यह प्रयोजन निकलता है कि इन आसनों में परिश्रम का केन्द्र मेरुदंड ही के आस पास होने से प्रत्येक मणि के पास जो प्राण नाड़ियों के उपशाखाओं के केन्द्र होते हैं उनको रक्त का अधिक प्रवाह प्राप्त होने से वे मजबूत बनते हैं। इन नाड़ियों को मजबूत करने में केवल शरीर स्वास्थ्य का उद्देश्य नहीं होता। योगाभ्यास से जिन अध्यात्मिक शक्तियां का निवास होता है उनको ग्रहण करने के लिये ये समर्थ रहें यहां इसका प्रधान उद्देश्य है। प्राण नाड़ियों के विषय में आसनों का प्रयोजन यहीं तक है। प्राण के महत्व को ध्यान में रख करके ही प्राण संग्रह के लिये तथा प्राण नाड़ियों को अधिक सुदृढ़ करने के लिये आगे प्राणायाम का अभ्यास किया जाता है।

शरीर के महत्व पूर्ण अवयवों को सुदृढ़ करने के लिये योगशास्त्र में कैसा सुव्यवस्थित व्यायाम बनाया गया है यह हम ऊपर बता चुके हैं। शरीर के इन अवयवों को इनके महत्व के अनुसार ही

अधिक ध्यान दिया गया है परन्तु कम महत्व के अवयवों को उन्होंने बिल्कुल छोड़ दिया हो यह बात नहीं है। हमारा अभिप्राय यहां पर स्नायुओं से है। अधिक परिश्रम के व्यायामों में स्नायुओं का जितना संवर्धन होता है उतना संवर्धन योग के ध्येय में आवश्यक नहीं है। फिर भी स्नायुओं का सुदृढ़ होना स्वास्थ्य के लिये कम आवश्यक नहीं है। परिश्रम के व्यायाम में सभी स्नायुओं को एकसी सुदृढ़ करने का यत्न किया जाता है तो योगशास्त्र में भी उनके परस्पर महत्व का विचार किया जाता है।

शरीर के स्वास्थ्य के दृष्टि से सबसे अधिक महत्व के स्नायु पेट के और पीठ के होते हैं। पीठ स्नायु मेरुदंड को सीधा रखते हैं। मणियों की माला के समान बना होने से उसको चारों तरफ से सुदृढ़ स्नायुओं का खिंचाव रहे तब ही यह सीधा खड़ा रह सकता है। भुजंगासन आदि आसन मेरुदंड को लचीला ही नहीं करते, पीठ के तथा पेट के स्नायुओं को वे सुदृढ़ भी करते हैं। पेट के स्नायुओं को मनुष्य शरीर में विशेष महत्व है, ये स्नायु हमेशा पेट में रही हुई आंतों को दबाये रहते हैं और इस प्रकार पाचन क्रिया में सहायक होते हैं। यदि यह स्नायु ढीले हो जांय तो पेट बाहर निकल आता है और पाचन क्रिया में फरक पड़ जाता है।

आसनों द्वारा शरीर किस प्रकार नीरोग रखा जाता है इसका हमने ऊपर संक्षेप से वर्णन दिया है। यदि योग विद्या का तथा उसके अन्तर्गत आसनों का भी ध्येय केवल आध्यात्मिक है तो उनका व्यवहार में कहां तक उपयोग करना संभव है इस एक प्रश्न का विचार करके हम इस लेख को पूरा करेंगे।

वर्तमान कालीन परिस्थितियों का विचार किया जाय तो शरीर संगठन में स्नायुओं को ही अधिक महत्व देना योग्य है। इस बात को मानते हुए भी स्नायुओं से अतिरिक्त अन्य अवयवों का विकास भी कम महत्व का नहीं है यही हम कहना चाहते हैं। हम प्रथम बता चुके हैं कि अधिक परिश्रम के व्यायाम में इन की तरफ बहुत कम ध्यान दिया जाता है। इसलिये स्नायुओं के विकास लिये परिश्रम के व्यायाम किए जांय तो अन्य महत्व के अंगों के विकास के लिए आसनों का अभ्यास भी करना आवश्यक है। इतना ध्यान रखना चाहिये कि दोनों के मूल तत्त्व भिन्न होने से दोनों को अलग अलग ही रखना उचित है। इसलिये दोनों के बीच में पर्याप्त समय देना आवश्यकीय है।

आसनों का रोग निवारण में भी बड़ा भारी उपयोग होता है। आसन के तत्त्व को समझ कर इसके प्रयोग नाना प्रकार के महाकठिन रोगों पर भी किया जा सकता है विशेष रूप से इनके प्रयोग चिरकालीन (Chronic) रोगों पर अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

कुछ मनुष्यों का यह मत है कि व्यावहारिक लाभ के लिये योगविद्या का उपयोग करना ठीक नहीं है; इससे इस विद्या का की दुरुपयोग होता है। परन्तु यह ठीक नहीं है व्यवहारिक लाभ प्राप्त करके इस शास्त्र पर लोगों की श्रद्धा बढ़ती ही है और यह श्रद्धा संयोग प्राप्त होने पर उनको आध्यात्मिक क्षेत्र में अवश्य प्रेरित करेगी इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

उपासना ।

इस पुस्तक में साकार, सगुण, निर्गुण कार्य ब्रह्म की तथा कारण ब्रह्म आदि कई प्रकार की उपासना को भिन्न २ प्रकार से समझाया है । उपासना की स्थिरता ही से मन एकाग्र होता है, आत्म साक्षात्कार होता है और समाधि की प्राप्ति होती है ।

इस उपासना के अनुसार अभ्यास करके समाधि तक पहुंचे हुए और आत्म साक्षात्कार किये हुए मनुष्य इस समय भी मौजूद हैं । मूल्य ॥) डाक महसूल अलाहिदा ।

वेदान्त दीपिका ।

अथवा

प्रश्नोत्तरी ।

वेदान्त के प्रथम और द्वितीय वर्ष में आये हुए वेदान्त विषयक चौवीस प्रश्नोत्तरों का अपूर्व संग्रह ।

इस ग्रन्थ में जिज्ञासु को स्वाभाविकता से होने वाली शंकाओं का अत्यंत मार्मिकता से समाधान किया गया है । वेदान्त के महत्व के ग्रन्थों को पढ़ने पर भी जिन शंकाओं का समाधान न होने से जिज्ञासु का चित्त अशान्त रहता है, वे शंकाएं इस ग्रन्थ को पढ़ने से समूल नष्ट हो जायगी । ग्रन्थ को पढ़ते समय जो नयी शंकाएं उत्पन्न होंगी उनका समाधान आगे ही मिलने से पाठकों को अत्यन्त आनन्द होगा ।

इसमें प्रत्येक विषय को प्रथम युक्तिपूर्वक समझाकर उसको अधिक दृढ़ करने के लिए प्रसंगानुकूल दृष्टान्त दिये गये हैं, जिससे ग्रन्थ अत्यन्त ही रोचक बन गया है । इसकी भाषा अत्यंत सरल होने से सामान्य भाषा ज्ञान वाले भी इससे लाभ उठा सकते हैं । ग्रन्थ सबके लिए संग्राह्य है । सजिल्द मूल्य १॥) डाक महसूल अलाहिदा ।